चंद्रकांता संतति पन्द्रहवां भाग

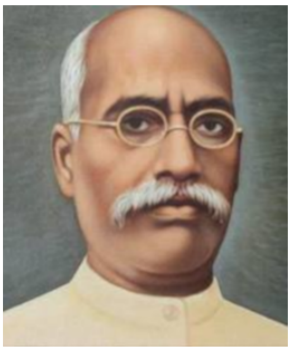

बाबू देवकीनंदन खत्री

चंद्रकांता संतति

पन्द्रहवां भाग

बयान - 1

इन्दिरा बोली - कुंअर साहब ने एक लम्बी सांस लेकर फिर अपना हाल कहना शुरू किया और कहा -

https://www.hindiadda.com/chandrakanta-santati-part-xv/

कुंअर - जब मुंह पर से कपड़ा हटा दिया गया, तब मैंने अपने को एक सजे हुए कमरे में देखा। वे ही आदमी जो मुझे यहां तक लाये थे अब भी मुझको चारों तरफ से घेरे हुए थे। छत के साथ बहुत-सी कन्दीलें लटक रही थीं और उनमें मोमबत्तियां जल रही थीं, दीवारगीरों में रोशनी हो रही थी, जमीन पर फर्श बिछा हुआ था और उस पर पचीस-तीस आदमी अमीराना ढंग की पोशाक पहिरे और सामने नंगी तलवारें रक्खे बैठे हुए थे मगर सभों का चेहरा नकाब से ढंका हुआ था। तमाम रास्ते में और उस समय मेरे दिल की क्या हालत थी सो मैं ही जानता हूं। एक आदमी ने जो सबसे ऊंची गद्दी पर बैठा था और शायद उन सभों का सभापति था मेरी तरफ मुंह करके कहा, "कुंअर गोपालसिंह तुम समझते होगे कि मैं जमानिया के राजा का लड़का हूं, जो चाहूं सो कर सकता हूं, मगर अब तुम्हें मालूम हुआ होगा कि हमारी सभा इतनी जबर्दस्त है कि तुम्हारे जैसे के साथ भी जो चाहे सो कर सकती है। इस समय तुम हम लोगों के कब्जे में हो, मगर नहीं हमारी सभा ईमानदार है। हम लोग ईमानदारी के साथ दुनिया का इन्तजाम करते हैं। तुम्हारा बाप बड़ा ही बेवकूफ है और राजा होने के लायक नहीं है। जिस दिन से वह अपने को महात्मा साधू बनाये हुए है, दयावान् कहलाने के लिये मरा जाता है। दुष्टों को उतना दण्ड नहीं देता जितना देना चाहिए। इसी से तुम्हारे शहर में खूनखराबा ज्यादे होने लग गया है मगर खूनी के गिरफ्तार हो जाने पर भी वह किसी खूनी को दया के वश में पड़कर प्राणदण्ड नहीं दिया। इसी से अब हम लोगों को तुम्हारे यहां के बदमाशों का इन्साफ अपने हाथ में लेना पड़ा। तुम्हें खूब मालूम है कि जिस खूनी को तुम्हारे बाप ने केवल देश निकाले का दण्ड देकर छोड़ दिया था उसकी लाश तुम्हारे ही शहर के किसी चौमुहाने पर पाई गई थी। आज तुम्हें यह भी मालूम हो गया कि वह कार्रवाई हमीं लोगों ने की थी। तुम्हारे शहर का रहने वाला दामोदरसिंह भी हमारी सभा का सभासद (मेम्बर) था। एक दिन इस सभा ने लाचार होकर यह हुक्म जारी किया है कि जमानिया के राजा को अर्थात् तुम्हारे बाप को इस दुनिया से उठा दिया जाये, क्योंकि वह गद्दी चलाने लायक नहीं है, और तुमको जमानिया की गद्दी पर बैठाया जाये। यद्यपि दामोदरसिंह को भी नियमानुसार हमारा साथ देना उचित था, वह तुम्हारे बाप का पक्ष करके बेईमान हो गया, अतएव लाचार होकर हमारी सभा ने उसे प्राणदण्ड दिया। अब तुम लोग दामोदरसिंह के खूनी का पता लगाना चाहते हो मगर इसका नतीजा अच्छा नहीं निकल सकता। आज इस सभा ने इसलिए तुम्हें बुलाया है कि तुम्हें हर बात से होशियार कर दिया जाय। इस सभा का हुक्म टल नहीं सकता, तुम्हारा बाप अब बहुत जल्द इस दुनिया से उठा दिया जायगा और तुमको जमानिया की गद्दी पर बैठने का मौका मिलेगा। तुम्हें उचित है कि हम लोगों का पीछा न करो अर्थात् यह

जानने का उद्योग न करो कि हम लोग कौन हैं या कहां रहते हैं, और अपने दोस्त इन्द्रदेव को भी ऐसा न करने के लिए ताकीद कर दो, नहीं तो तुम्हारे और इन्द्रदेव के लिए भी प्राणदण्ड का हुक्म दिया जायगा, बस केवल इतना ही समझाने के लिए तुम इस सभा में बुलाये गये थे और अब बिदा किये जाते हो।"

इतना कहकर उस नकाबपोश ने ताली बजाई और उन्हीं दुष्टों ने जो मुझे वहां ले गये थे मेरे मुंह पर कपड़ा डालकर फिर उसी तरह से कस दिया। खम्भे से खोलकर मुझे बाहर ले आये, कुछ दूर पैदल चलाकर घोड़े पर लादा और उसी तरह दोनों पैर कसकर बांध दिये। लाचार होकर मुझे फिर उसी तरह का सफर करना पड़ा और किस्मत ने फिर उसी तरह मुझे तीन पहर तक घोड़े पर बैठाया। इसके बाद एक जंगल में पहुंचकर घोड़े पर से नीचे उतार दिया, हाथ-पैर खोल दिये, मुंह पर से कपड़ा हटा दिया और जिस घोड़े पर मैं सवार कराया गया था उसे साथ लेकर वे लोग वहां से रवाना हो गये। उस तकलीफ ने मुझे ऐसा बेदम कर दिया था कि दस कदम चलने की भी ताकत न थी और भूख-प्यास के मारे बुरी हालत हो गई थी। दिन पहर भर से ज्यादे चढ़ चुका था, पानी का बहता हुआ चश्मा मेरी आंखों के सामने था मगर मुझमें उठकर वहां तक जाने की ताकत न थी। घण्टे भर तो यों ही पड़ा रहा, इसके बाद धीरे-धीरे चश्मे के पास गया, खूब पानी पीया तब जी ठिकाने हुआ। मैं नहीं कह सकता कि किन कठिनाइयों से दो दिन में यहां तक पहुंचा हूं। अभी तक घर नहीं गया, पहिले तुम्हारे पास आया हूं। हां, धिक्कार है मेरी जिन्दगी और राजकुमार कहलाने पर! जब मेरी रिआया का इन्साफ बदमाशों के अधीन है तो मैं यहां का हाकिम क्योंकर कहलाने लगा जब मैं अपनी हिफाजत खुद नहीं कर सकता जो प्रजा की रक्षा कैसे कर सकूंगा बड़े खेद की बात है अदने दर्जे के बदमाश लोग हम पर मुकद्दमा करें और अब मेरे प्यारे पिता को मारने की फिक्र भी जारी है!

गोपालसिंह - निःसन्देह उस समय मुझे बड़ा ही रंज हुआ था। आज जब मैं उन बातों को याद करता हूं तो मालूम होता है कि उन लोगों को यदि मुन्दर की शादी मेरे साथ करना मन्जूर न होता तो निःसन्देह मुझे भी मार डालते और या फिर गिरफ्तार ही न करते।

इन्द्र - ठीक है, (इन्दिरा से) अच्छा तब!

इन्दिरा - मेरे पिता ने जब यह सुना कि दामोदरसिंह के नौकर रामप्यारे ने कुंअर साहब को धोखा दिया तो उन्हें निश्चय हो गया कि रामप्यारे भी जरूर उस कमेटी का मददगार है। वे कुंअर साहब की आज्ञानुसार तुरन्त उठ खड़े हुए और रामप्यारे की

खोज में फाटक पर आये मगर खोज करने पर मालूम हुआ कि रामप्यारे का पता नहीं लगता। लौटकर कुंअर साहब के पास आये और बोले, "जो सोचा था वही हुआ। रामप्यारे भाग गया, आपका खिदमतगार भी जरूर भाग गया होगा।"

इसके बाद कुंअर साहब और मेरे पिता देर तक बातचीत करते रहे। पिता ने कुंअर साहब को कुछ खिला-पिला और समझा-बुझाकर शान्त किया और वादा किया कि मैं उस सभा तथा उसके सभासदों का पता जरूर लगाऊंगा। पहर भर रात बाकी होगी जब कुंअर साहब अपने घर की तरफ रवाना हुए। कई आदमियों को संग लिये हुए मेरे पिता भी उनके साथ गए। राजमहल के अन्दर पैर रखते ही कुंअर साहब को पहिले अपने पिता अर्थात् बड़े महाराज से मिलने की इच्छा हुई और वे मेरे पिता को साथ लिये हुए सीधे बड़े महाराज के कमरे में चले गए, मगर अफसोस, उस समय बड़े महाराज का देहान्त हो चुका था और यह बात सबसे पहिले कुंअर साहब ही को मालूम हुई थी। उस समय बड़े महाराज पलंग के ऊपर इस तरह पड़े हुए थे जैसे कोई घोर निद्रा में हो मगर जब कुंअर साहब ने उन्हें जगाने के लिए हिलाया तब मालूम हुआ कि वे महानिद्रा के अधीन हो चुके हैं।

इन्दिरा के मुंह से इतना हाल सुनते-सुनते राजा गोपालसिंह की आंखों में आंसू भर आए और दोनों कुमारों के नेत्र भी सूखे न रहे। राजा साहब ने एक लम्बी सांस लेकर कहा, "मेरी मां का देहान्त पहिले ही हो चुका था, उस समय पिता के भी परलोक सिधारने से मुझे बड़ा कष्ट हुआ। (इन्दिरा से) अच्छा आगे कहो।"

इन्दिरा - बड़े महाराज के देहान्त की खबर जब चारों तरफ फैली तो महल और शहर में बड़ा ही कोलाहल मचा, मगर इस बात का खयाल कुंअर साहब और मेरे माता-पिता के अतिरिक्त और किसी को भी न था कि बड़े महाराज की जान भी उसी गुप्त कमेटी ने ली है और न इन दोनों ने अपने दिल का हाल किसी से कहा ही। इसके दो महीने बाद कुंअर साहब जमानिया की गद्दी पर बैठे और राजा कहलाने लगे। इस बीच में मेरे पिता ने उस कमेटी का पता लगाने के लिए बहुत उद्योग किया मगर कुछ पता न लगा। उन दिनों कई रजवाड़ों से मातमपुर्सी के खत आ रहे थे। रणधीरसिंहजी (किशोरी के नाना) के यहां से मातमपुर्सी का खत लेकर उनके ऐयार गदाधरसिंह[1] आये। गदाधरसिंह से और पिता से कुछ नातेदारी भी है जिसे मैं भी ठीक-ठीक नहीं जानती और इस समय मातमपुर्सी की रस्म पूरी करने के बाद मेरे पिता की इच्छानुसार

1. इसी गदाधरसिंह ने जब नानक की मां से संयोग किया तो रघुबरसिंह के नाम से अपना परिचय दिया था और इसके बाद भूतनाथ के नाम से अपने को मशहूर किया।

उन्होंने भी मेरे ननिहाल ही में डेरा डाला जहां मेरे पिता रहते थे और इस बहाने से कई दिनों तक दिन-रात दोनों आदमियों का साथ रहा। मेरे पिता ने यहां का हाल तथा उस गुप्त कमेटी में कुंअर साहब के पहुंचाये जाने का भेद कहके गदाधरसिंह से मदद मांगी जिसके जवाब में गदाधरसिंह ने कहा कि मैं मदद देने के लिये जी-जान से तैयार हूं परन्तु अपने मालिक की आज्ञा बिना ज्यादे दिन तक यहां ठहर नहीं सकता और यह काम दो-चार दिन का नहीं। तुम राजा गोपालसिंह से कहो कि वे मुझे मेरे मालिक से थोड़े दिनों के लिए मांग लें तब मुझे कुछ उद्योग करने का मौका मिलेगा। आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात आपने (गोपालसिंह की तरफ बताकर) अपना एक सवार पत्र देकर रणधीरसिंह के पास भेजा और उन्होंने गदाधरसिंह के नाम राजा साहब का काम कर देने के लिए आज्ञापत्र भेज दिया।

गदाधरसिंह जब जमानिया में आए थे तो अकेले न थे बल्कि अपने तीन-चार चेलों को भी साथ लाये थे, अस्तु अपने उन्हीं चेलों को साथ लेकर वे उस गुप्त कमेटी का पता लगाने के लिए तैयार हो गए। उन्होंने मेरे पिता से कहा कि इस शहर में रघुबरसिंह नामी एक आदमी रहता है जो बड़ा ही शैतान, रिश्वती और बेईमान है, मैं उसे फंसाकर अपना काम निकालना चाहता हूं मगर अफसोस यह कि वह तुम्हारे गुरुभाई अर्थात् तिलिस्मी दारोगा का दोस्त है और तिलिस्मी दारोगा को तुम्हारे राजा साहब बहुत मानते हैं। खैर मुझे तो उन लोगों का कुछ खयाल नहीं है मगर तुम्हें इस बात की इत्तिला पहिले ही से दिये जाता हूं। इसके जवाब में मेरे पिता ने कहा कि उस शैतान को मैं भी जानता हूं, यदि उसे फांसने से कोई काम निकल सकता है तो निकालो और इस बात का कुछ खयाल न करो कि वह मेरे गुरुभाई का दोस्त है। इसके बाद मेरे पिता और गदाधरसिंह बहुत देर तक आपस में सलाह करते रहे और दूसरे दिन गदाधरसिंह ने लोगों के देखने में महाराज से बिदा होकर अपने घर का रास्ता लिया। गदाधरसिंह के जाने के बाद मेरे पिता भी उन्हीं लोगों का पता लगाने के लिए घूमने-फिरने और उद्योग करने लगे। एक दिन रात के समय मेरे पिता भेष बदलकर शहर में घूम रहे थे, अकस्मात् घूमते-फिरते गंगा किनारे उसी ठिकाने जा पहुंचे जहां (गोपालसिंह की तरफ इशारा कर) इन्हें दुश्मनों ने गिरफ्तार कर लिया था। मेरे पिता ने भी एक डोंगी किनारे पर बंधी हुई देखी। उस समय उन्हें कुंअर साहब की बात याद आ गई और वे धीरे-धीरे चलकर उस डोंगी के पास जा खड़े हुए उसी समय कई आदमियों ने यकायक पहुंचकर उन्हें गिरफ्तार कर लिया। वे

लोग हाथ में तलवारें लिये और अपने चेहरों को नकाब से ढंके हुए थे। यद्यपि मेरे पिता के पास भी तलवार थी और उन्होंने अपने आपको बचाने के लिए बहुत कुछ उद्योग किया बल्कि दो-एक आदमियों को जख्मी भी किया मगर नतीजा कुछ भी न निकला क्योंकि दुश्मनों ने एक मोटा कपड़ा बड़ी फुर्ती से उनके सिर और मुंह पर डालकर उन्हें हर तरह से बेकार कर दिया। मुख्तसर यह कि दुश्मनों ने उन्हें गिरफ्तार करने के बाद हाथ-पैर बांध के डोंगी में डाल दिया, डोंगी खोली गई और एक तरफ को तेजी के साथ रवाना हुई। पिता के मुंह पर कपड़ा कसा हुआ था इसलिये वे देख नहीं सकते थे कि डोंगी किस तरफ जा रही है और दुश्मन गिनती में कितने हैं। दो घण्टे तक उसी तरह चले जाने के बाद वे किश्ती के नीचे उतारे गये और जबर्दस्ती एक घोड़े पर चढ़ाए गये, दोनों पैर नीचे से कसके बांध दिये गये और उसी तरह उस गुप्त कमेटी में पहुंचाये गये जिस तरह कुंअर साहब अर्थात् राजा गोपालसिंह जी वहां पहुंचाये गये थे। उसी तरह मेरे पिता भी एक खम्बे के साथ कसके बांध दिये गये और उनके मुंह पर से वह आफत का पर्दा हटाया गया। उस समय एक भयानक दृश्य उन्हें दिखाई दिया। जैसा कि कुंअर साहब ने उनसे बयान किया था ठीक उसी तरह का सजा-सजाया कमरा और वैसे ही बहुत से नकाबपोश बड़े ठाठ के साथ बैठे हुए थे। पिता ने मेरी मां को भी एक खम्भे के साथ बंधी हुई और उस कलमदान को जो मेरे नाना साहब ने दिया था सभापति के सामने एक छोटी-सी चौकी के ऊपर रक्खे देखा। पिता को बड़ा आश्चर्य हुआ और अपनी स्त्री को भी अपनी तरह मजबूर देखकर मारे क्रोध के कांपने लगे मगर कर ही क्या सकते थे, साथ ही इसके उन्हें इस बात का भी निश्चय हो गया कि वह कलमदान भी कुछ इसी सभा से सम्बन्ध रखता है। सभापति ने मेरे पिता की तरफ देखकर कहा, "क्यों जी इन्द्रदेव, तुम तो अपने को बहुत होशियार और चालाक समझते हो! हमने राजा गोपालसिंह की जुबानी क्या कहला भेजा था क्या तुम्हें नहीं कहा गया था कि तुम हम लोगों का पीछा न करो फिर तुमने ऐसा क्यों किया क्या हम लोगों से कोई बात छिपी रह सकती है! खैर अब बताओ तुम्हारी क्या सजा की जाय देखो तुम्हारी स्त्री और यह कलमदान भी इस समय हम लोगों के अधीन है, बेईमान दामोदरसिंह ने तो इस कलमदान को गड्ढे में डालकर हम लोगों को फंसाना चाहा था मगर उसका अन्तिम वार खाली गया।" इसके जवाब में मेरे पिता ने गंभीर भाव से कहा, "निःसन्देह मैं आप लोगों का पता लगा रहा था मगर बदनीयती के साथ नहीं बल्कि इस नीयत से कि मैं आप लोगों की इस सभा में शरीक हो जाऊं।"

सभापति ने हंसकर कहा, "बहुत खासे! अगर ऐसा ही हम लोग धोखे में आने वाले होते तो हम लोगों की सभा अब तक रसातल को पहुंच गई होती! क्या हम लोग नहीं

जानते कि तुम हमारी सभा के जानी दुश्मन हो बेईमान दामोदरसिंह ने तो हम लोगों को चौपट करने में कुछ बाकी नहीं रक्खा था मगर बड़ी खुशी की बात है कि यह कलमदान हम लोगों को मिल गया और हमारी सभा का भेद छिपा रह गया!"

सभापति की इस बात से मेरे पिता को मालूम हो गया कि उस कलमदान में निःसन्देह इसी सभा का भेद बन्द है, अस्तु उन्होंने मुस्कुराहट के साथ सभापति की बातों का यों जवाब दिया, "मुझे दुश्मन समझना आप लोगों की भूल है, अगर मैं सभा का दुश्मन होता तो अब तक आप लोगों को जहन्नुम में पहुंचा दिया होता। मैं इस कलमदान को खोलकर सभा के भेदों से अच्छी तरह जानकार हो चुका हूं और इन भेदों को एक दूसरे कागज पर लिखकर अपने एक मित्र को भी दे चुका हूं। मैं...।"

पिता ने केवल इतना ही कहा था कि सभापति ने जिसकी आवाज से जाना जाता था कि घबड़ा गया है पूछा, "क्या तुम इस कलमदान को खोल चुके हो?'

पिता - हां।

सभा - और इस सभा का भेद लिखकर तुमने किसके सुपुर्द किया है?

पिता - सो नहीं बता सकता क्योंकि उसका नाम बताना उसे तुम लोगों के कब्जे में दे देना है।

सभा - आखिर हम लोगों को कैसे विश्वास हो कि जो कुछ तुमने कहा वह सब सच है?

पिता - अगर मेरे कहने का विश्वास हो तो मुझे अपनी सभा का सभासद बना लो फिर जो कुछ कहोगे खुशी से करूंगा, अगर विश्वास न हो तो मुझे मारकर बखेड़ा तै करो, फिर देखो कि मेरे पीछे तुम लोगों की क्या दुर्दशा होती है?

इन्दिरा ने दोनों कुमारों से कहा, "मेरे पिता से और उस सभा के सभापति से बड़ी देर तक बातें होती रहीं और पिता ने उसे अपनी बातों में ऐसा लपेटा कि उसकी अक्ल चकरा गई तथा उसे विश्वास हो गया कि इन्द्रदेव ने जो कुछ कहा वह सच है। आखिर सभापति ने उठकर अपने हाथों से मेरे पिता की मुश्कें खोलीं। मेरी मां को भी छुट्टी दिलाई और मेरे पिता को अपने पास बैठाकर कुछ कहा ही चाहता था कि मकान के बाहर दरवाजे पर किसी के चिल्लाने की आवाज आई, मगर वह आवाज एक बार से ज्यादे सुनाई न दी और जब तक सभापति किसी को बाहर जाकर

दरयाफ्त करने की आज्ञा दे तब तक हाथों में नंगी तलवारें लिये हुए पांच आदमी घबड़ाते हुए उस सभा के बीच जा पहुंचे। उन पांचों की सूरतें बड़ी ही भयानक थीं और उनकी पोशाकें ऐसी थीं कि उन पर तलवार कोई काम नहीं कर सकती थी अर्थात् फौलादी कवच पहिरकर उन लोगों ने अपने को बहुत मजबूत बनाया हुआ था। चेहरे सभों के सिन्दूर से रंगे हुए थे और कपड़ों पर खून के छींटे भी पड़े हुए थे जिससे मालूम होता था कि दरवाजे पर पहरा देने वालों को मारकर वे लोग यहां तक आये हैं। उन पांचों में एक आदमी जो सबके आगे था बड़ा ही फुर्तीला और हिम्मतवर मालूम होता था। उसने तेजी के साथ आगे बढ़कर उस कलमदान को उठा लिया जो मेरे नाना साहब ने मेरी मां को दिया था। इतने ही में उस सभा के जितने सभासद थे सब तलवारें खेंचकर उठ खड़े हुए और घमासान लड़ाई होने लगी। उस समय मौका देखकर मेरे पिता ने मां को उठा लिया और हर तरह से बचाते हुए मकान से बाहर निकल गये। उधर उन पांचों भयानक आदमियों ने उस सभा की अच्छी तरह मिट्टी पलीद की और चार सभासदों की जान और कलमदान लेकर राजी-खुशी के साथ चले गये। उस समय यदि मेरे पिता चाहते तो उन पांचों बहादुरों से मुलाकात कर सकते थे क्योंकि वे लोग उनके देखते-देखते पास ही से भागकर निकल गये थे मगर मेरे पिता ने जान-बूझकर अपने को इसलिए छिपा लिया था कि कहीं वे लोग हमें भी तकलीफ न दें। जब वे लोग देखते-देखते दूर निकल गये तब वे मेरी मां का हाथ थामे हुए तेजी के साथ चल पड़े। उस समय उन्हें मालूम हुआ कि हम जमानिया की सरहद के बाहर नहीं हैं।

इन्द्र - (ताज्जुब से) क्या कहा जमानिया की सरहद के बाहर नहीं हैं!!

इन्दिरा - जी हां, वे लोग जमानिया शहर के बाहर थोड़ी ही दूर पर एक बहुत बड़े और पुराने मकान के अन्दर यह कमेटी किया करते थे और जिसे गिरफ्तार करते थे उसे धोखा देने की नीयत से व्यर्थ ही 'दस-बीस' कोस का चक्कर दिलाते थे जिससे मालूम हो कि यह कमेटी किसी दूसरे ही शहर में है।

गोपाल - और हमारे ही दरबार ही के बहुत से आदमी उस कमेटी में शरीक थे इसी सबब से उसका पता न लगता था क्योंकि जो तहकीकात करने वाले थे वे ही कमेटी करने वाले थे।

इन्द्र - (इन्दिरा से) अच्छा तब?

इन्दिरा - मेरे पिता दो घन्टे के अन्दर ही राजमहल में जा पहुंचे। राजा साहब ने पहरे वालों को आज्ञा दे रक्खी थी कि इन्द्रदेव जिस समय चाहें हमारे पास चले आवें, कोई रोक-टोक न करने पाये, अतएव मेरे पिता सीधे राजा साहब के पास जा पहुंचे जो गहरी नींद में बेखबर सोये हुए थे और चार आदमी उनके पलंग के चारों तरफ घूम-घूमकर पहरा दे रहे थे। पिता ने राजा साहब को उठाया और पहरे वालों को अलग कर देने के बाद अपना हाल कह सुनाया। यह जानकर राजा साहब को बड़ा ही ताज्जुब हुआ कि कमेटी इसी शहर में है। उन्होंने मेरे पिता से या मेरी मां से खुलासा हाल पूछने में विलंब करना उचित न जाना और मां को हिफाजत के साथ महल के अन्दर भेजने के बाद कपड़े पहिरकर तैयार हो गये, खूंटी से लटकती हुई तिलिस्मी तलवार ली और मेरे पिता तथा और कई सिपाहियों को साथ ले मकान के बाहर निकले तथा दो घड़ी के अन्दर ही उस मकान में जा पहुंचे जिसमें कमेटी हुआ करती थी। वह किसी जमाने का बहुत पुराना मकान था जो आधे से ज्यादा गिरकर बर्बाद हो चुका था फिर भी उसके कई कमरे और दालान दुरुस्त और काम देने लायक थे। उस मकान के चारों तरफ टूटे-फूटे और भी कई मकान थे जिनमें कभी किसी भले आदमी का जाना नहीं होता।[1] जिस कमरे में कमेटी होती थी जब वे गये तो उसी तरह पर सजा हुआ पाया जैसा राजा साहब और मेरे पिता देख चुके थे। कन्दीलों में रोशनी हो रही थी। फर्क इतना ही था कि फर्श पर तीन लाशें पड़ी हुई थीं, फर्श खून से तरबतर हो रहा था और दीवारों पर खून के छींटे पड़े हुए थे। जब लाशों के चेहरे पर से नकाब हटाया गया तो राजा साहब को बड़ा ही ताज्जुब हुआ।

इन्द्र - वे लोग भी जान-पहिचान के ही होंगे जो मारे गये थे?

गोपाल - जी हां, एक तो मेरा वही खिदमतगार था जिसने मुझे धोखा दिया था, दूसरा दामोदरसिंह का नौकर रामप्यारे था जिसने मुझे गंगा किनारे ले जाकर फंसाया!

1. चन्द्रकान्ता सन्तति, आठवें भाग के छठे बयान में इसी पुरानी आबादी और टूटे - फूटे मकानों का हाल लिखा गया है।

था, परन्तु तीसरी लाश को देखकर मेरे आश्चर्य, रंज और क्रोध का अन्त न रहा क्योंकि वह मेरे खजांची साहब थे जिन्हें मैं बहुत ही नेक, ईमानदार, सूधा और बुद्धिमान समझता था। आप लोगों को इन्दिरा का कुल हाल सुन जाने पर मालूम होगा कि कम्बख्त दारोगा ही इस सभा का मुखिया था मगर अफसोस उस समय मुझे इस बात का गुमान तक न हुआ। जब मैं वहां की कुल चीजों को लूटकर और उन लाशों को उठवाकर घर आया तो सबेरा हो चुका था और शहर में इस बात की खबर

अच्छी तरह फैल चुकी थी क्योंकि मुझे बहुत से आदमियों को लेकर जाते हुए सैकड़ों आदमियों ने देखा और जब मैं लौटकर आया तो दरवाजे पर कम से कम पांच सौ आदमी उन लाशों को देखने के लिए जमा हो गये थे। उस समय मैंने बेईमान और विश्वासघाती दारोगा को बुलाने के लिए आदमी भेजा मगर उस आदमी ने बाहर आकर कहा कि दारोगा साहब छत पर से गिरकर जख्मी हो गये हैं, सिर फट गया है और उठने लायक नहीं हैं। मैंने उस बात को सच मान लिया था लेकिन वास्तव में दारोगा भी उस सभा में जख्मी हुआ था जिसमें मेरे खजांची ने जान दी थी। मगर अफसोस मेरी किस्मत में तो तरह-तरह की तकलीफें बदी हुई थीं। मैं उस दुष्ट की तरफ से क्योंकर होशियार होता! (इन्दिरा से) खैर तुम आगे का हाल कहो, यह सब तुम्हारी ही जबान से अच्छा मालूम होता है।

इन्दिरा - हां तो अब संक्षेप ही में इस किस्से को बयान करती हूं। तीनों लाशें ठिकाने पहुंचा दी गईं और राजा साहब मेरे पिता का हाथ थामे यह कहते हुए महल के अन्दर चले कि "चलो सर्यू से पूछें कि वह क्योंकर उन दुष्टों के फन्दे में फंस गई थी और उस सभा में कौन-कौन आदमी शरीक थे, शायद उसने सभों को बिना नकाब के देखा हो।" मगर जब राजमहल में गये तो मालूम हुआ कि सर्यू यहां आई ही नहीं। यह सुनते ही राजा साहब घबरा गये और बोल उठे, "क्या हमारे यहां के सभी आदमी उस कमेटी से मिले हुए हैं?'

गोपाल - उस समय तो मैं पागल-सा हो गया था, कुछ भी अकल काम नहीं करती थी और यह किसी तरह मालूम नहीं होता था कि हमारे यहां कितने आदमी विश्वास करने योग्य हैं और कितने उस कमेटी से मिले हुए हैं। जिन तीन विश्वासी आदमियों के साथ मैंने सर्यू को महल में भेजा था वे तीनों आदमी भी गायब हो गये थे। मुझे तो विश्वास हो गया था कि मेरी और इन्द्रदेव की जान भी न बचेगी मगर वाह रे इन्द्रदेव, उसने अपने दिल को खूब ही सम्हाला और बड़ी मुस्तैदी और बुद्धिमानी से महीने भर के अन्दर बहुत से आदमियों का पता लगाया जो मेरे ही नौकर होकर उस कमेटी में शरीक थे और मैंने उन सभों को तोप के आगे रखकर उड़वा दिया और सच तो यों है कि उसी दिन से वह गुप्त कमेटी टूट गई और फिर कायम नहीं हुई।

इन्दिरा - जिस समय मेरे पिता को मालूम हुआ कि मेरी मां महल के अन्दर नहीं पहुंची बीच में ही गायब हो गई, उस समय उन्हें बड़ा ही रंज हुआ और वे अपने घर जाने के लिए तैयार हो गये। उन्होंने राजा साहब से कहा कि मैं पहिले घर जाकर यह मालूम किया चाहता हूं कि वहां से केवल मेरी स्त्री ही को दुश्मन लोग ले गए थे या

मेरी लड़की इन्दिरा को भी। मगर मेरे पिता घर की तरफ न जा सके क्योंकि उसी समय घर से एक दूत आ पहुंचा और उसने इत्तिला दी कि सर्यू और इन्दिरा दोनों यकायक गायब हो गईं। इस खबर को सुनकर मेरे पिता और भी उदास हो गए फिर भी उन्होंने बड़ी कारीगरी से दुश्मनों का पता लगाना आरम्भ किया और बहुतों को पकड़ा भी जैसा कि अभी राजा साहब कह चुके हैं।

इन्द्र - क्या तुम दोनों को दुश्मनों ने गिरफ्तार कर लिया था?

इन्दिरा - जी हां।

आनन्द - अच्छा तो पहिले अपना और अपनी मां का हाल कहो कि किस तरह दुश्मनों के फन्दे में फंस गईं?

इन्दिरा - जो आज्ञा। तो मैं कह ही चुकी हूं कि मेरे पिता जब जमानिया में आये तो अपने दो ऐयारों को साथ लाये थे जो दुश्मनों का पता लगाते ही लगाते गायब हो गये थे।

इन्द्र - हां, कह चुकी हो, अच्छा तब?

इन्दिरा - इन्हीं दोनों ऐयारों की सूरत बन दुश्मनों ने हम लोगों को धोखा दिया।

इन्द्र - दुश्मन उस मकान के अन्दर गये कैसे तुम कह चुकी हो कि वहां का रास्ता बहुत टेढ़ा और गुप्त है?

इन्दिरा - ठीक है, मगर कम्बख्त दारोगा उस रास्ते का हाल बखूबी जानता था और वही उस कमेटी का मुखिया था, ताज्जुब नहीं कि उसी ने उन आदमियों को भेजा हो।

इन्द्र - ठीक है, निःसन्देह ऐसा ही होगा, अच्छा तब क्या हुआ उन्होंने क्योंकर तुम लोगों को धोखा दिया?

इन्दिरा - संध्या का समय था जब मैं अपनी मां के साथ उस छोटे से नजरबाग में टहल रही थी जो बंगले के बगल ही में था। यकायक मेरे पिता के वे ही दोनों ऐयार वहां पहुंचे जिन्हें देख मेरी मां बहुत खुश हुई और देर तक जमानिया का हालचाल पूछती रही। उन ऐयारों ने बयान किया कि, "इन्द्रदेव ने तुम दोनों को जमानिया बुलाया है। हम लोग रथ लेकर आये हैं। मगर साथ ही इसके उन्होंने यह भी कहा है कि यदि वे खुशी से आना चाहें तो ले आना नहीं तो लौट आना।" मेरी मां को

जमानिया पहुंचकर अपनी मां को देखने की बहुत ही लालसा थी, वह कब देर करने लगी थी, तुरन्त ही राजी हो गई और घण्टे भर के अन्दर ही सब तैयारी कर ली। ऐयार लोग मातबर समझे ही जाते हैं अस्तु ज्यादे खोज करने की कोई आवश्यकता न समझी, केवल दो लौंडियों को और मुझे साथ लेकर चल पड़ी, कलमदान भी साथ ले लिया। हमारे दूसरे ऐयार भी उन्हें सच्चा समझ बैठे थे। आखिर हम लोग खोह के बाहर निकले और पहाड़ी के नीचे उतरने की नीयत से थोड़ी ही दूर आगे बढ़े थे कि चारों तरफ से दस-पन्द्रह दुश्मनों ने घेर लिया। अब उन ऐयारों ने भी रंगत पलटी। मुझे और मेरी मां को जबर्दस्ती बेहोशी की दवा सुंघा दी। हम दोनों तुरन्त ही बेहोश हो गए, मैं नहीं कह सकती कि दोनों लौंडियों की क्या दुर्दशा हुई मगर जब मैं होश में आई तो अपने को एक तहखाने में कैद पाया और अपनी मां को अपने पास देखा जो मेरे पहिले ही होश में आ चुकी थी और मेरा सिर गोद में लेकर रो रही थी। हम दोनों के हाथ-पैर खुले हुए थे। जिस कोठरी में हम लोग कैद थे वह लम्बी-चौड़ी थी और सामने की तरफ दरवाजे की जगह लोहे का जंगला लगा हुआ था। जंगले के बाहर दालान था और उसमें एक तरफ चढ़ने के लिये सीढ़ियां बनी हुई थीं तथा सीढ़ी के बगल ही में एक आले के ऊपर चिराग जल रहा था। मैं पहिले बयान कर चुकी हूं कि उन दिनों जाड़े का मौसम था इसलिए हम लोगों को गर्मी की तकलीफ न थी। जब मैं होश में आई, मेरी मां ने रोना बन्द किया और मुझे बड़ी देर तक धीरज और दिलासा देने के बाद बोली, "बेटी, अगर कोई तुझसे उस कलमदान के बारे में कुछ पूछे तो कह दीजियो कि कलमदान खोला जा चुका है मगर मैं उसके अन्दर का हाल नहीं जानती। हां, मेरी मां तथा और भी कई आदमी उसका भेद जान चुके हैं। अगर उन आदमियों का नाम पूछे तो कह दीजियो कि मैं नहीं जानती, मेरी मां को मालूम होगा। मैं यद्यपि लड़की थी मगर समझ-बूझ बहुत थी और उस बात को मेरी मां ने कई दफे अच्छी तरह समझा दिया था। मेरी मां ने कलमदान के विषय में ऐसा कहने के लिए मुझसे क्यों कहा सो मैं नहीं जानती, शायद उससे और दुष्टों से पहिले कुछ बातचीत हो चुकी हो मगर मुझे जो कुछ मां ने कहा था उसे मैंने अच्छी तरह निबाहा। थोड़ी देर बाद पांच आदमी उसी सीढ़ी की राह से धड़धड़ाते हुए नीचे उतर आए और मेरी मां को जबर्दस्ती ऊपर ले गए। मैं जोर-जोर से रोती और चिल्लाती रह गई मगर उन लोगों ने मेरा कुछ भी खयाल न किया और अपना काम करके चले गए।

मैं उन लोगों की सूरत-शक्ल के बारे में कुछ भी नहीं कह सकती क्योंकि वे लोग नकाब से अपने चेहरे छिपाए हुए थे। थोड़ी ही देर के बाद फिर एक नकाबपोश मेरे पास आया जिसके कपड़े और कद पर खयाल करके मैं कह सकती हूं कि वह उन लोगों में से नहीं था जो मेरी मां को ले गए थे बल्कि कोई दूसरा ही आदमी था। वह

नकाबपोश मेरे पास बैठ गया और मुझे धीरज और दिलासा देता हुआ कहने लगा कि, "मैं तुझे इस कैद से छुड़ाऊंगा।" मुझे उसकी बातों पर विश्वास हो गया और इसके बाद वह मुझसे बातचीत करने लगा।

नकाबपोश - क्या तुझे उस कलमदान के अन्दर का हाल पूरा-पूरा मालूम है?

मैं - नहीं।

नकाबपोश - क्या तेरे सामने कलमदान खोला नहीं गया था?

मैं - खोला गया था मगर उसका हाल मुझे नहीं मालूम, हां मेरी मां तथा और कई आदमियों को मालूम है जिन्हें मेरे पिता ने दिखाया था।

नकाब - उन आदमियों के नाम तू जानती है?

मैं - नहीं।

उसने कई दफे कई तरह से उलट-फेरकर पूछा मगर मैंने अपनी बातों में फर्क न डाला। और तब मैंने उससे अपनी मां का हाल पूछा लेकिन उसने कुछ भी न बताया और मेरे पास से उठकर चला गया। मुझे खूब याद है कि उसके दो पहर बाद मैं जब प्यास के मारे बहुत दुःखी हो रही थी तब फिर एक आदमी मेरे पास आया। वह भी अपने चेहरे को नकाब से छुपाए हुए था। मैं डरी और समझी कि फिर उन्हीं कम्बख्तों में से कोई मुझे सताने के लिए आया है, मगर वह वास्तव में गदाधरसिंह थे और मुझे उस कैद से छुड़ाने के लिये आए थे। यद्यपि मुझे उस समय यह खयाल हुआ कि कहीं यह भी उन दोनों ऐयारों की तरह मुझे धोखा न देते हों जिनकी बदौलत मैं घर से निकलकर कैदखाने में पहुंची थी, मगर नहीं, वे वास्तव में गदाधरसिंह ही थे और उन्हें मैं अच्छी तरह पहिचानती थी। उन्होंने मुझे गोद में उठा लिया और तहखाने के ऊपर निकल कई पेचीले रास्तों से घूमते-फिरते मैदान में पहुंचे, वहां उनके दो आदमी एक घोड़ा लिए तैयार थे। गदाधरसिंह मुझे लेकर घोड़े पर सवार हो गये। अपने आदमियों को ऐयारी भाषा में कुछ कहकर बिदा किया, और खुद एक तरफ रवाना हो गए। उस समय रात बहुत कम बाकी थी और सबेरा हुआ चाहता था। रास्ते में मैंने उनसे अपनी मां को हाल पूछा, उन्होंने उसका कुल हाल अर्थात् मेरी मां का उस सभा में पहुंचना, मेरे पिता का भी कैद होकर वहां जाना, कलमदान की लूट तथा मेरे पिता का अपनी स्त्री को लेकर निकल जाना बयान किया और यह भी कहा कि कलमदान को लूटकर ले भागने वाले का पता नहीं लगा। लगभग चार-पांच कोस चले जाने के

बाद वे एक छोटी-सी नदी के किनारे पहुंचे जिसमें घुटने बराबर से ज्यादे जल न था। उस जगह गदाधरसिंह घोड़े से नीचे उतरे और मुझे भी उतारा, खुर्जी से कुछ मेवा निकालकर मुझे खाने को दिया। मैं उस समय बहुत भूखी थी अस्तु मेवा खाकर पानी पिया, इसके बाद वह फिर मुझे लेकर घोड़े पर सवार हुए और नदी पार होकर एक तरफ को चल निकले। दो घण्टे तक घोड़े को धीरे-धीरे चलाया और फिर तेज किया। दो पहर दिन के समय हम लोग एक पहाड़ी के पास पहुंचे जहां बहुत ही गुन्जान जंगल था और गदाधरसिंह के चार-पांच आदमी भी वहां मौजूद थे। हम लोगों के पहुंचते ही गदाधरसिंह के आदमियों ने जमीन पर कम्बल बिछा दिया, कोई पानी लेने के लिए चला गया, कोई घोड़े को ठंडा करने लगा और कोई रसोई बनाने की धुन में लगा क्योंकि चावल-दाल इत्यादि उन आदमियों के पास मौजूद था। गदाधरसिंह भी मेरे पास बैठ गये और अपने बटुए में से कागज, कलम, दवात निकालकर कुछ लिखने लगे। मेरे देखते ही देखते तीन-चार घण्टे तक गदाधरसिंह ने बटुए में से कई कागजों को निकालकर पढ़ा और उनकी नकल की तब तक रसोई भी तैयार हो गई। हम लोगों ने भोजन किया और जब बिछावन पर आकर बैठे तो गदाधरसिंह ने फिर उन कागजों को देखना और नकल करना शुरू किया। मैं रात भर की जगी हुई थी इसलिए मुझे नींद आ गई। जब मेरी आंखें खुलीं तो घण्टे भर रात जा चुकी थी, उस समय गदाधरसिंह फिर मुझे लेकर घोड़े पर सवार हुए और अपने आदमियों को कुछ समझा-बुझाकर रवाना हो गये। दो-तीन घण्टे रात बाकी थी जब हम लोग लक्ष्मीदेवी के बाप बलभद्रसिंह के मकान पर जा पहुंचे। बलभद्रसिंह और मेरे पिता में बहुत मित्रता थी इसलिए गदाधरसिंह ने मुझे वहीं पहुंचा देना उत्तम समझा। दरवाजे पर पहुंचने के साथ ही बलभद्रसिंह को इत्तिला करवाई गई। यद्यपि वे उस समय गहरी नींद में सोये हुए थे मगर सुनने के साथ ही निकल आए और बड़ी खातिरदारी के साथ मुझे और गदाधरसिंह को घर के अन्दर अपने कमरे में ले गए जहां सिवाय उनके और कोई भी न था। बलभद्रसिंह ने मेरे सिर पर हाथ फेरा और बड़े प्यार से अपनी गोद में बैठाकर गदाधरसिंह से हाल पूछा। गदाधरसिंह ने सब हाल जो मैं बयान कर चुकी हूं उनसे कहा और इसके बाद नसीहत की कि, "इन्दिरा को बड़ी हिफाजत से अपने पास रखिये, जब तक दुश्मनों का अन्त न हो जाय तब तक इसका प्रकट होना उचित नहीं है। मैं फिर जमानिया जाता हूं और देखता हूं कि वहां क्या हाल है। इन्द्रदेव से मुलाकात होने पर मैं इन्दिरा को यहां पहुंचा देना बयान कर दूंगा।" बलभद्रसिंह ने बहुत ही प्रसन्न होकर गदाधरसिंह को धन्यवाद दिया और वे थोड़ी देर तक बातचीत करने के बाद सबेरा होने के पहिले ही वहां से रवाना हो गये। गदाधरसिंह के चले जाने पर मुझे लेकर घर के अन्दर गये। उनकी स्त्री ने मुझे बड़े

प्यार से गोद में ले लिया और लक्ष्मीदेवी ने तो मेरी ऐसी कदर की जैसी कोई अपनी जान की कदर करता है। मुझे वहां बहुत दिनों तक रहना पड़ा था इसलिए मुझसे और लक्ष्मीदेवी से हद से ज्यादे मुहब्बत हो गई थी। मैं बड़े आराम से उनके यहां रहने लगी। मालूम होता है कि गदाधरसिंह ने जमानिया जाकर मेरे पिता से मेरा सब हाल कहा क्योंकि थोड़े दिन बाद मेरे पिता मुझे देखने के लिए बलभद्रसिंह के यहां आये और उस समय उनकी जुबानी मालूम हुआ कि मेरी मां पुनः गिरफ्तार हो गई अर्थात् महल में पहुंचने के साथ ही गायब हो गई। मैं अपनी मां के लिए बहुत रोई मगर मेरे पिता ने मुझे दिलासा दिया। केवल एक दिन रहके मेरे पिता जमानिया की तरफ चले गये और मुझे वहां ही छोड़ गए।

मैं कह चुकी हूं कि मुझसे और लक्ष्मीदेवी से बड़ी मुहब्बत हो गयी थी इसीलिए मैंने अपने नाना साहब और उस कलमदान का कुल हाल उससे कह दिया था और यह भी कह दिया था कि उस कलमदान पर तीन तस्वीरें बनी हुई हैं, दो को तो मैं नहीं जानती मगर बिचली तस्वीर मेरी है और उसके नीचे मेरा नाम लिखा हुआ है। जमानिया जाकर मेरे पिता ने क्या-क्या काम किया सो मैं नहीं कह सकती परन्तु यह अवश्य सुनने में आया था कि उन्होंने बड़ी चालाकी और ऐयारी से उन कमेटी वालों का पता लगाया और राजा साहब ने उन सभों को प्राणदण्ड दिया।

गोपाल - निःसन्देह उन दुष्टों का पता लगाना इन्द्रदेव का ही काम था। जैसी-जैसी ऐयारियां इन्द्रदेव ने कीं वैसी कम ऐयारों को सूझेंगी। अफसोस, उस समय वह कलमदान हाथ न आया नहीं तो सहज ही में सब दुष्टों का पता लग जाता और यही सबब था कि दुष्टों की सूची में दारोगा, हेलासिंह या जैपालसिंह का नाम न चढ़ा और वास्तव में ये ही तीनों उस कमेटी के मुखिया थे जो मेरे हाथ से बच गये और फिर उन्हीं की बदौलत मैं गारत हुआ।

इन्द्रजीत - ताज्जुब नहीं कि दारोगा के बारे में इन्द्रदेव ने सुस्ती कर दी हो और गुरुभाई का मुलाहिजा कर गये हों।

गोपाल - हो सकता है।

आनन्द - (इन्दिरा से) क्या उस कलमदान के अन्दर का हाल तुम्हें भी मालूम न था?

इन्दिरा - जी नहीं, अगर मुझे मालूम होता तो ये तीनों दुष्ट क्यों बचने पाते हां मेरी मां उस कलमदान को खोल चुकी थी और उसे उसके अन्दर का हाल मालूम था मगर वह तो गिरफ्तार ही कर ली गई थी फिर उन भेदों को खोलता कौन?

आनन्द - आखिर उस कलमदान के अन्दर का हाल तुम्हें कब मालूम हुआ?

इन्दिरा - अभी थोड़े ही दिन हुए जब मैं कैदखाने में अपनी मां के पास पहुंची तो उसने उस कलमदान का भेद बताया था।

आनन्द - मगर फिर उस कलमदान का पता न लगा?

इन्दिरा - जी नहीं। उसके बाद आज तक उस कलमदान का हाल मुझे मालूम न हुआ, मैं नहीं कह सकती कि उसे कौन ले गया या वह क्या हुआ। हां इस समय राजा साहब की जुबानी सुनने में आया है कि वही कलमदान कृष्णा जिन्न ने राजा वीरेन्द्रसिंह के दरबार में पेश किया था।

गोपाल - उस कलमदान का हाल मैं जानता हूं। सच तो यह है कि हमारा बखेड़ा उस कलमदान ही के सबब से हुआ। यदि वह कलमदान मुझे या इन्द्रदेव को उस समय मिल जाता तो लक्ष्मीदेवी की जगह मुन्दर मेरे घर न आती और मुन्दर तथा दारोगा की बदौलत मेरी गिनती मुर्दों में न होती और न भूतनाथ ही पर आज इतने जुर्म लगाये जाते। वास्तव में उस कलमदान को गदाधरसिंह ही ने उन दुष्टों की सभा में से लूट लिया था जो आज भूतनाथ के नाम से मशहूर है। इसमें कोई शक नहीं कि उसने इन्दिरा की जान बचाई मगर कलमदान को छिपा गया और उसका हाल किसी से न कहा। बड़े लोगों ने सच कहा है कि, "विशेष लोभ आदमी को चौपट कर देता है।" वही हाल भूतनाथ का हुआ। पहिले भूतनाथ बहुत नेक और ईमानदार था और आजकल भी वह अच्छी राह पर चल रहा है मगर बीच में थोड़े दिनों तक उसके ईमान में फर्क पड़ गया था जिसके लिए आज वह अफसोस कर रहा है। आप इन्दिरा का और हाल सुन लीजिए और फिर कलमदान का भेद मैं आपसे बयान करूंगा।

इन्द्रजीत - जो आज्ञा। (इन्दिरा से) अच्छा तुम अपना हाल कहो कि बलभद्रसिंह के यहां जाने के बाद फिर तुम पर क्या बीती?

इन्दिरा - मैं बहुत दिनों तक उनके यहां आराम से अपने को छिपाए हुए बैठी रही और मेरे पिता कभी-कभी वहां जाकर मुझसे मिल आया करते थे। यह मैं नहीं कह सकती कि पिता ने मुझे बलभद्रसिह के यहां क्यों छोड़ रक्खा था। जब बहुत दिनों बाद लक्ष्मीदेवी की शादी का दिन आया और बलभद्रसिंहजी लक्ष्मीदेवी को लेकर यहां आये तो मैं भी उनके साथ आई। (गोपालसिंह की तरफ इशारा करके) आपने जब मेरे आने की खबर सुनी तो मुझे अपने यहां बुलवा भेजा, अस्तु मैं लक्ष्मीदेवी को जो दूसरी जगह टिकी हुई थी छोड़कर राजमहल में चली आई। राजमहल में चले आना

ही मेरे लिए काल हो गया क्योंकि दारोगा ने मुझे देख लिया और अपने पिता तथा राजा साहब की तरह मैं भी दारोगा की तरफ से बेफिक्र थी। इस शादी में मेरे पिता मौजूद न थे। मुझे इस बात का ताज्जुब हुआ मगर जब राजा साहब से मैंने पूछा तो मालूम हुआ कि वे बीमार हैं इसीलिए नहीं आये। जिस दिन मैं राजमहल में आई उसी दिन रात को लक्ष्मीदेवी की शादी थी। शादी हो जाने पर सबेरे जब मैंने लक्ष्मीदेवी की सूरत देखी तो मेरा कलेजा धक से हो गया क्योंकि लक्ष्मीदेवी के बदले मैंने किसी दूसरी औरत को घर में पाया। हाय उस समय मेरे दिल की जो हालत थी मैं बयान नहीं कर सकती। मैं घबड़ाई हुई बाहर की तरफ दौड़ी जिससे राजा साहब को इस बात की खबर दूं और इनसे इसका सबब पूछूं। राजा साहब जिस कमरे में थे उसका रास्ता जनाने महल से मिला हुआ था, अतएव मैं भीतर ही भीतर उस कमरे में चली गई मगर वहां राजा साहब के बदले दारोगा को बैठे हुए पाया। मेरी सूरत देखते ही एक दफे दारोगा के चेहरे का रंग उड़ गया मगर तुरंत ही उसने अपने को सम्हालकर मुझसे पूछा, "क्यों इन्दिरा, क्या हाल है तू इतने दिनों तक कहां थी' मुझे उस चाण्डाल की तरफ से कुछ भी शक न था इसलिये मैं उसी से पूछ बैठी कि, "लक्ष्मीदेवी के बदले में मैं किसी दूसरी औरत को देखती हूं, इसका क्या सबब है' यह सुनते ही दारोगा घबड़ा उठा और बोला, "नहीं-नहीं तूने वास्तव में किसी दूसरे को देखा होगा, लक्ष्मीदेवी तो उस बाग वाले कमरे में है। चल मैं तुझे उसके पास पहुंचा आऊं!" मैंने खुश होकर कहा कि, "चलो पहुंचा दो!" दारोगा झट उठ खड़ा हुआ और मुझे साथ लेकर भीतर ही भीतर बाग वाले कमरे की तरफ चला। वह रास्ता बिल्कुल एकान्त था। थोड़ी ही दूर जाकर दारोगा ने एक कपड़ा मेरे मुंह पर डाल दिया। ओह, उसमें से किसी प्रकार की महक आ रही थी जिसके सबब दो-तीन दफे से ज्यादा मैं सांस न ले सकी और बेहोश हो गई। फिर मुझे कुछ भी खबर न रही कि दुनिया के परदे पर क्या हुआ या क्या हो रहा है।

गोपाल - इन्दिरा की कथा के सम्बन्ध में गदाधरसिंह (भूतनाथ) का हाल छूटा जाता है क्योंकि इन्दिरा उस विषय में कुछ भी नहीं जानती इसीलिए बयान नहीं कर सकती, मगर बिना उसका हाल जाने किस्से का सिलसिला ठीक न होगा इसलिये मैं स्वयं गदाधरसिंह का हाल बीच ही में बयान कर देना उचित समझता हूं।

इन्द्र - हां-हां, जरूर कहिये, कलमदान का हाल जाने बिना आनन्द नहीं मिलता।

गोपाल - उस गुप्त सभा में यकायक पहुंचकर कलमदान को लूटने वाला वही गदाधरसिंह था। उसने कलमदान को खोल डाला और उसके अन्दर जो कुछ

कागजात थे उन्हें अच्छी तरह पढ़ा। उसमें एक तो वसीयतनामा था जो दामोदरसिंह ने इन्दिरा के नाम लिखा था और उसने अपनी कुल जायदाद का मालिक इन्दिरा को ही बनाया था। इसके अतिरिक्त और सब कागज उसी गुप्त कमेटी के थे और सब सभासदों के नाम लिखे हुए थे, साथ ही इसके एक कागज दामोदरसिंह ने अपनी तरफ से उस कमेटी के विषय में लिखकर रख दिया था जिसके पढ़ने से मालूम हुआ कि दामोदरसिंह उस सभा के मंत्री थे, दामोदरसिंह के खयाल से वह सभा अच्छे कामों के लिए स्थापित हुई थी और उन आदमियों को सजा देना उसका काम था जिन्हें मेरे पिता दोष साबित होने पर भी प्राणदण्ड न देकर केवल अपने राज्य से निकाल दिया करते थे और ऐसा करने से रिआया में नाराजी फैलती जाती थी। कुछ दिनों के बाद उस सभा में बेईमानी शुरू हो गई और उसके सभासद लोग उसके जरिये से रुपया पैदा करने लगे, तभी दामोदरसिंह को भी उस सभा से घृणा हो गई परन्तु नियमानुसार वह सभा को छोड़ नहीं सकते थे और छोड़ देने पर उसी सभा द्वारा प्राण जाने का भय था। एक दिन दारोगा ने सभा में प्रस्ताव किया कि बड़े महाराज को मार डालना चाहिए। इस प्रस्ताव का दामोदरसिंह ने अच्छी तरह खण्डन किया मगर दारोगा की बात सबसे भारी समझी जाती थी इसलिए दामोदरसिंह की किसी ने भी न सुनी और बड़े महाराज को मारना निश्चय हो गया। ऐसा करने में दारोगा और रघुबरसिंह का फायदा था क्योंकि वे दोनों आदमी लक्ष्मीदेवी के बदले में हेलासिंह की लड़की मुन्दर के साथ मेरी शादी कराया चाहते थे और बड़े महाराज के रहते यह बात बिल्कुल असम्भव थी। आखिर दामोदरसिंह ने अपनी जान का कुछ खयाल न किया और वसीयतनामा लिखकर कलमदान में बन्द किया और कलमदान अपनी लड़की के हवाले कर दिया जैसा कि आप इन्दिरा की जुबानी सुन चुके हैं। जब गदाधरसिंह को सभा का कुल हाल जितने आदमियों को सभा मार चुकी थी उनके नाम और सभा के मेम्बरों के नाम मालूम हो गये तब उसे लालच ने घेरा और उसने सभा के सभासदों से रुपये वसूल करने का इरादा किया। कलमदान में जितने कागज थे उसने सभों की नकल ले ली और असल कागज तथा कलमदान कहीं छिपाकर रख आया। इसके बाद गदाधरसिंह दारोगा के पास गया और उससे एकान्त में मुलाकात करके बोला कि, "तुम्हारी गुप्त सभा का हाल अब खुला चाहता है और तुम लोग जहन्नुम में पहुंचा चाहते हो, वह दामोदरसिंह वाला कलमदान तुम्हारी सभा से लूट ले जाने वाला मैं ही हूं, और मैंने उस कलमदान के अन्दर का सारा हाल जान लिया। अब वह कलमदान मैं तुम्हारे राजा साहब के हाथ में देने के लिए तैयार हूं। अगर तुम्हें विश्वास न हो तो इन कागजों को देखो जो मैं अपने हाथ से नकल करके तुम्हें दिखाने के लिए ले आया हूं।"

इतना कहकर गदाधरसिंह ने वे कागज दारोगा के सामने फेंक दिये। दारोगा के तो होश उड़ गये और मौत भयानक रूप से उसकी आंखों के सामने नाचने लगी। उसने चाहा कि किसी तरह गदाधरसिंह को खपा (मार) डाले मगर यह बात असम्भव थी क्योंकि गदाधरसिंह बहुत ही काइयां और हर तरह से होशियार तथा चौकन्ना था, अतएव सिवाय उसे राजी करने के दारोगा को और कोई बात न सूझी। आखिर बीस हजार अशर्फी चार रोज के अन्दर दे देने के वायदे पर दारोगा ने अपनी जान बचाई और कलमदान भूतनाथ से मांगा। भूतनाथ ने बीस हजार अशर्फी लेकर दारोगा की जान छोड़ देने का वादा किया और कलमदान देना भी स्वीकार किया, अस्तु दारोगा ने उतने ही को गनीमत समझा और चार दिन के बाद बीस हजार अशर्फी गदाधरसिंह को अदा करके आप पूरा कंगाल बन बैठा। इसके बाद गदाधरसिंह ने और मेम्बरों से भी कुछ वसूल किया और कलमदान दारोगा को दे दिया मगर दारोगा से इस बात का इकरारनामा लिखा लिया कि वह किसी ऐसे काम में शरीक न होगा और न खुद ऐसा काम करेगा जिसमें इन्द्रदेव, सर्यू, इन्दिरा और मुझको (गोपालसिंह) भी किसी तरह का नुकसान पहुंचे। इन सब कामों से छुट्टी पाकर गदाधरसिंह दारोगा से अपने घर के लिये बिदा हुआ मगर वास्तव में वह फिर भी घर न गया और भेष बदलकर इसलिए जमानिया में घूमने लगा कि रघुबरसिंह के भेदों का पता लगाये जो बलभद्रसिंह के साथ विश्वासघात करने वाला था। वह फकीरी सूरत में राजा रघुबरसिंह के यहां आकर नौकर और सिपाहियों में बैठने और हेलमेल बढ़ाने लगा। थोड़े ही दिनों में उसे मालूम हो गया कि रघुबरसिंह अभी तक हेलासिंह से पत्र-व्यवहार करता है और पत्र ले जाने का काम केवल बेनीसिंह करता है जो रघुबरसिंह का मातबर सिपाही है। जब एक दफे बेनीसिंह हेलासिंह के यहां गया तो गदाधरसिंह ने उसका पीछा किया और मौका पाकर उसे गिरफ्तार करना चाहा लेकिन बेनीसिंह इस बात को समझ गया और दोनों में लड़ाई हो गई। गदाधरसिंह के हाथ से बेनीसिंह मारा गया और गदाधरसिंह बेनीसिंह बनकर रघुबरसिंह के यहां रहने तथा हेलासिंह के यहां पत्र लेकर जाने और जवाब ले आने लगा। इस हीले से तथा कागजों की चोरी करने से थोड़े ही दिनों में रघुबरसिंह का सब भेद उसे मालूम हो गया और तब उसने अपने को रघुबरसिंह पर प्रकट किया। लाचार हो रघुबरसिंह ने भी उसे बहुत-सा रुपया देकर अपनी जान बचाई। यह किस्सा बहुत बड़ा है और इसका पूरा-पूरा हाल मुझे भी मालूम नहीं है, जब भूतनाथ अपना किस्सा आप बयान करेगा तब पूरा हाल मालूम होगा, फिर भी मतलब यह कि उस कलमदान की बदौलत भूतनाथ ने रुपया भी बहुत पैदा किया और साथ ही अपने दुश्मन भी बहुत बनाए जिसका नतीजा वह अब भोग रहा है और कई नेक काम करने पर भी उसकी

जान को अभी तक छुट्टी नहीं मिलती। केवल इतना ही नहीं, जब भूतनाथ असली बलभद्रसिंह का पता लगावेगा तब और भी कई विचित्र बातों का पता लगेगा, मैंने तो सिर्फ इन्दिरा के किस्से का सिलसिला बैठाने के लिए बीच ही में इतना बयान कर दिया।

इन्द्र - यह सब हाल आपको कब और कैसे मालूम हुआ?

गोपाल - जब आपने मुझे कैद से छुड़ाया उसके बाद हाल ही में ये सब बातें मुझे मालूम हुईं और जिस तरह मालूम हुईं सो अभी कहने का मौका नहीं, अब आप इन्दिरा का किस्सा सुनिये फिर जो कुछ शंका रहेगी उसके मिटाने का उद्योग किया जायगा।

इन्दिरा - जो आज्ञा। दारोगा ने मुझे बेहोश कर दिया और जब मैं होश में आई तो अपने को एक लम्बे-चौड़े कमरे में पाया। मेरे हाथ-पैर खुले हुए थे और वह कमरा भी बहुत साफ और हवादार था। उसके दो तरफ की दीवार में दो दरवाजे थे और दूसरी तरफ की पक्की दीवार में छोटी-छोटी तीन खिड़कियां बनी हुई थीं जिनमें से हवा बखूबी आ रही थी मगर वे खिड़कियां इतनी ऊंची थीं कि उन तक मेरा हाथ नहीं जा सकता था। बाकी दो तरफ की दीवारों में जो लकड़ी की थीं तरह-तरह की सुन्दर और बड़ी तस्वीरें बनी हुई थीं और छत में दो रोशनदान थे जिनमें से सूर्य की चमक आ रही थी तथा उस कमरे में अच्छी तरह उजाला हो रहा था। एक तरफ की पक्की दीवार में दो दरवाजे थे, उनमें से एक दरवाजा खुला हुआ था और दूसरा बन्द था। मैं जब होश में आई तो अपना सिर किसी की गोद में पाया। मैं घबड़ाकर उठ बैठी और उस औरत की तरफ देखने लगी जिसकी गोद में मेरा सिर था। वह मेरे ननिहाल की वही दाई थी जिसने मुझे गोद में खिलाया था और जो मुझे बहुत प्यार करती थी। यद्यपि मैं कैद में थी और मां-बाप की जुदाई में अधमुई हो रही थी फिर भी अपनी दाई को देखते ही थोड़ी देर के लिए सब दुःख भूल गई और ताज्जुब के साथ मैंने उस दाई पूछा, "अन्ना, तू यहां कैसे आई' क्योंकि मैं उस दाई को 'अन्ना' कहके पुकारा करती थी।

अन्ना - बेटी, मैं यह तो नहीं जानती तू यहां कब से है मगर मुझे आये अभी दो घण्टे से ज्यादे नहीं हुए। मुझे कम्बख्त दारोगा ने धोखा देकर गिरफ्तार कर लिया और बेहोश करके यहां पहुंचा दिया मगर इस तरह तुझे देखकर मैं अपना दुःख बिल्कुल भूल गई, तू अपना हाल तो बता कि यहां कैसे आई?

मैं - मुझे भी कम्बख्त दारोगा ही ने बेहोश करके यहां पहुंचाया है। राजा गोपालसिंह की शादी हो गई मगर जब मैंने अपनी प्यारी लक्ष्मीदेवी के बदले में किसी दूसरी औरत को वहां देखा तो घबड़ाकर इसका सबब पूछने के लिए राजा साहब के पास गई मगर उनके कमरे में केवल दारोगा बैठा हुआ था, मैं उसी से पूछ बैठी। बस यह सुनते ही वह मेरा दुश्मन हो गया, धोखा देकर दूसरे मकान की तरफ ले चला और रास्ते में एक कपड़ा मेरे मुंह पर डालकर बेहोश कर दिया। उसके बाद की मुझे कुछ भी खबर नहीं है। दारोगा ने तुझे क्या कहके कैद किया?

अन्ना - मैं एक काम के लिए बाजार में गई थी। रास्ते में दारोगा का नौकर मिला। उसने कहा कि इन्दिरा दारोगा साहब के घर में आई है, उसने मुझे तुमको बुलाने के लिए भेजा है और बहुत ताकीद की है कि खड़े-खड़े सुनती जाओ। मैं उसकी बात सच समझ उसी वक्त दारोगा के घर चली गई मगर उस हरामजादे ने मेरे साथ भी बेईमानी की, बेहोशी की दवा मुझे जबर्दस्ती सुंघाई। मैं नहीं कह सकती कि एक घंटे तक बेहोश रही या एक दिन तक, पर जब मैं यहां पहुंची तब मैं होश में आई, उस समय केवल दारोगा नंगी तलवार लिए सामने खड़ा था। उसने मुझसे कहा, "देख, तू वास्तव में इन्दिरा के पास पहुंचाई गई है। यह लड़की अकेले कैदखाने में रहने योग्य नहीं है, इसलिए तू भी इसके साथ कैद की जाती है और तुझे हुक्म दिया जाता है कि हर तरह इसकी खातिर और तसल्ली करियो और जिस तरह हो इसे खिलाइयो-पिलाइयो। देख, उस कोने में खाने-पीने का सब सामान रक्खा है।"

मैं - मेरी नानी का क्या हाल है अफसोस, मैं तो उससे मिल भी न सकी और इस आफत में फंस गई!

अन्ना - तेरी नानी का क्या हाल बताऊं, वह तो नाममात्र को जीती है, अब उसका बचना कठिन है।

अन्ना की जुबानी अपनी नानी का हाल सुनके मैं बहुत रोई-कलपी। अन्ना ने मुझे बहुत समझाया और धीरज देकर कहा कि ईश्वर का ध्यान कर, उसकी कृपा से हम लोग जरूर इस कैद से छूट जायेंगे। मालूम होता है कि दारोगा तेरे जरिये से कोई काम निकालना चाहता है, अगर ऐसा न होता तो वह तुझे मार डालता और तेरी हिफाजत के लिए मुझे यहां न लाता, अस्तु जहां तक हो उसका काम पूरा न होने देना चाहिए। खैर जब वह यहां आकर तुझसे कुछ कहे-सुने तो तू मुझ पर टाल दिया कीजियो। फिर जो कुछ होगा मैं समझ लूगी। अब तू कुछ खा-पी ले फिर जो कुछ होगा देखा जायगा। अन्ना के समझाने से मैं खाना खाने के लिए तैयार हो गई। खाने

- पीने का सामान सब घर में मौजूद था, मैंने भी खाया-पीया, इसके बाद अन्ना के पूछने पर मैंने अपना सब हाल शुरू से आखीर तक उसे कह सुनाया। इतने में शाम हो गई। मैं कह चुकी हूं कि उस कमरे की छत में रोशनदान बना हुआ था जिसमें से रोशनी बखूबी आ रही थी, इसी रोशनदान के सबब से हम लोगों को मालूम हुआ कि संध्या हो गई। थोड़ी ही देर बाद दरवाजा खोलकर दो आदमी उस कमरे में आये, एक ने चिराग जला दिया और दूसरे ने खाने-पीने का ताजा सामान रख दिया और बासी बचा हुआ उठाकर ले गया। उसके जाने के बाद फिर मुझसे और अन्ना से बातचीत होती रही और दो घण्टे के बाद मुझे नींद आ गई।

इन्द्र - (गोपालसिंह से) इस जगह मुझे एक बात का सन्देह हो रहा है।

गोपाल - वह क्या?

इन्द्र - इन्दिरा लक्ष्मीदेवी को पहिचानती थी इसलिए दारोगा ने उसे तो गिरफ्तार कर लिया मगर इन्द्रदेव का उसने क्या बन्दोस्त किया, क्योंकि लक्ष्मीदेवी को तो इन्द्रदेव भी पहिचानते थे?

गोपाल - इसका सबब शायद यह है कि ब्याह के समय इन्द्रदेव यहां मौजूद न थे और उसके बाद भी लक्ष्मीदेवी को देखने का उन्हें मौका न मिला। मालूम होता है कि दारोगा ने इन्द्रदेव से मिलने के बारे में नकली लक्ष्मीदेवी को कुछ समझा दिया था जिससे वर्षों तक मुन्दर ने इन्द्रदेव के सामने से अपने को बचाया और इन्द्रदेव ने भी इस बात की कुछ परवाह न की। अपनी स्त्री और लड़की के गम में इन्द्रदेव ऐसा डूबे कि वर्षों बीत जाने पर भी वह जल्दी घर से नहीं निकलते थे, इच्छा होने पर कभी-कभी मैं स्वयं उनसे मिलने के लिए जाया करता था। कई वर्ष बीत जाने पर जब मैं कैद हो गया और सभों ने मुझे मरा हुआ जाना तब इन्द्रदेव के खोज करने पर लक्ष्मीदेवी का पता लगा और उसने लक्ष्मीदेवी को कैद से छुड़ाकर अपने पास रक्खा। इन्द्रदेव को भी मेरा मरना निश्चय हो गया था इसलिए मुन्दर के विषय में उन्होंने ज्यादे बखेड़ा उठाना व्यर्थ समझा और दुश्मनों से बदला लेने के लिये लक्ष्मीदेवी को तैयार किया। कैद से छूटने के बाद मैं खुद इन्द्रदेव से मिलने के लिये गुप्त रीति से गया था तब उन्होंने लक्ष्मीदेवी का हाल मुझसे कहा था।

इन्द्रजीत - इन्द्रदेव ने लक्ष्मीदेवी को कैद से क्योंकर छुड़ाया था और उस विषय में क्या किया सो मालूम न हुआ।

राजा गोपालसिंह ने लक्ष्मीदेवी का कुल हाल जो हम ऊपर लिख आए हैं, बयान किया और इसके बाद फिर इन्दिरा ने अपना किस्सा कहना शुरू किया।

इन्दिरा - उसी दिन आधी रात के समय जब मैं सोई हुई थी और अन्ना भी मेरी बगल में लेटी हुई थी, यकायक इस तरह की आवाज आई जैसे किसी ने अपने सिर पर से कोई गठरी उतारकर फेंकी हो। उस आवाज ने मुझे तो न जगाया मगर अन्ना झट उठ बैठी और इधर-उधर देखने लगी। मैं बयान कर चुकी हूं कि इस कमरे में दो दरवाजे थे। उनमें से एक दरवाजा तो लोगों के आने-जाने के लिए था और वह बाहर से बन्द रहता था मगर दूसरा खुला हुआ था जिसके अन्दर मैं तो नहीं गई थी मगर अन्ना हो आई थी और कहती थी कि उसके अन्दर तीन कोठरियां हैं, एक पायखाना है और दो कोठरियां खाली पड़ी हैं। अन्ना को शक हुआ कि उसी कोठरी के अन्दर से आवाज आई है। उसने सोचा कि शायद दारोगा का कोई आदमी यहां आकर उस कोठरी में गया हो। थोड़ी ही देर तक वह उसके अन्दर से किसी के निकलने की राह देखती रही मगर इसके बाद उठ खड़ी हुई। अन्ना थी तो औरत मगर उसका दिल बड़ा ही मजबूत था, वह मौत से भी जल्दी डरने वाली न थी। उसने हाथ में चिराग उठा लिया और उस कोठरी के अन्दर गई। पैर रखने के साथ ही उसकी निगाह एक गठरी पर पड़ी मगर इधर - उधर देखा तो कोई आदमी नजर न आया। दूसरी कोठरी के अन्दर गई और तीसरी कोठरी में भी झांक के देखा मगर कोई आदमी नजर न आया, तब उसने चिराग एक किनारे रख दिया और उस गठरी को खोला। इतने ही में मेरी आंख खुल गई और घर में अंधेरा देखकर मुझे डर मालूम हुआ। मैंने हाथ फैलाकर अन्ना को उठाना चाहा मगर वह तो वहां थी नहीं। मैं घबराकर उठ बैठी। यकायक उस कोठरी की तरफ मेरी निगाह गई और उसके भीतर चिराग की रोशनी दिखाई दी। मैं घबराकर जोर-जोर से 'अन्ना-अन्ना' पुकारने लगी। मेरी आवाज सुनते ही वह चिराग और गठरी लिए बाहर निकल आई और बोली, "ले बेटी, मैं तुझे एक खुशखबरी सुनाती हूं।" मैं खुश होकर बोली, "क्या है अन्ना!"

अन्ना ने यह कहकर गठरी मेरे आगे रख दी कि देख इसमें क्या है! मैंने बड़े शौक से वह गठरी खोली मगर उसमें प्यारी मां के कपड़े देखकर मुझे रुलाई आ गई। ये वे ही कपड़े थे जो मेरी मां पहिरकर घर से निकली थी मगर उन दोनों ऐयारों ने उसे गिरफ्तार कर लिया था और ये ही कपड़े पहिरे हुए कैदखाने में मेरे साथ थी जब दुश्मनों ने जबर्दस्ती उसे मुझसे जुदा किया था। उन कपड़ों पर खून के छींटे पड़े हुए थे और उन्हीं छींटों को देखकर मुझे रुलाई आ गई। अन्ना ने कहा, "तू रोती क्यों है, मैं कह जो चुकी कि तेरे लिए खुशखबरी लाई हूं, इन कपड़ों को मत देख बल्कि इसमें

एक चीठी तेरी मां के हाथ की लिखी हुई है उसे देख!" मैंने उन कपड़ों को अच्छी तरह खोला और उसके अन्दर से वह चीठी निकाली। मालूम होता है जब मैं 'अन्ना-अन्ना' कहके चिल्लाई तब वह जल्दी में उन सभों को लपेटकर बाहर निकल आई थी। खैर जो हो मगर वह चीठी अन्ना पढ़ चुकी थी क्योंकि वह पढ़ी-लिखी थी। मैं बहुत कम पढ़-लिख सकती थी, केवल नाम लिखना भर जानती थी, मगर अपनी मां के अक्षर अच्छी तरह पहिचानती थी, क्योंकि वही मुझे पढ़ना-लिखना सिखाती थी। अस्तु चीठी खोलकर मैंने अन्ना को पढ़ने के लिए कहा और अन्ना ने पढ़कर मुझे सुनाया। उसमें यह लिखा हुआ था -

"मेरी प्यारी बेटी इन्दिरा,

जितना मैं तुझे प्यार करती थी निःसन्देह तू भी मुझे उतना ही चाहती थी मगर अफसोस, विधाता ने हम दोनों को जुदा कर दिया और मुझे तेरी भोली सूरत देखने के लिये तरसना पड़ा! परन्तु कोई चिन्ता नहीं, यद्यपि मेरी तरह तू भी दुःख भोग रही है मगर तू चाहेगी तो मैं कैद से छूट जाऊंगी और साथ ही इसके तू भी कैदखाने से बाहर मुझसे मिलेगी। अब मेरा और तेरा दोनों का कैद से छूटना तेरे ही हाथ है और छूटने की तरकीब केवल यही है कि दारोगा साहब जो कुछ तुझे कहें उसे बेखटके कर दे।

अगर ऐसा करने से इन्कार करेगी तो मेरी और तेरी दोनों की जान मुफ्त में जायगी।

तेरी प्यारी मां सर्यू"

बयान - 2

अब हम रोहतासगढ़ किले के तहखाने में दुश्मनों से घिरे हुए राजा वीरेन्द्रसिंह वगैरह का कुल हाल लिखते हैं।

जिस समय राजा वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह इत्यादि ने तहखाने के ऊपरी हिस्से से आई हुई यह आवाज सुनी कि, "होशियार, होशियार, देखो यह चाण्डाल बेचारी किशोरी को पकड़े लिए जाता है" इत्यादि - तो सभी की तबियत बहुत ही बेचैन हो गई। राजा वीरेन्द्रसिंह, तेजसिंह, इन्द्रदेव और देवीसिंह वगैरह घबराकर चारों तरफ देखने और सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए।

कमलिनी हाथ में तिलिस्मी खंजर लिये हुए कैदखाने वाले दरवाजे के बीच ही में खड़ी थी। उसने इन्द्रदेव से कहा - "मुझे भी उस कोठरी के अन्दर पहुंचाइये जिसमें किशोरी को रक्खा था, फिर मैं उसे छुड़ा लूंगी।"

इन्द्रदेव - बेशक उस कोठरी के अन्दर तुम्हारे जाने से किशोरी को मदद पहुंचेगी मगर किसी ऐयार को भी अपने साथ लेती जाओ।

देवीसिंह - मुझे साथ जाने के लिए कहिये।

इन्द्रदेव - (वीरेन्द्रसिंह से) आप देवीसिंह को साथ जाने की आज्ञा दीजिये।

वीरेन्द्र - (देवीसिंह से) जाइये।

तेज - नहीं, कमलिनी के साथ मैं खुद जाऊंगा क्योंकि मेरे पास भी राजा गोपालसिंह का दिया हुआ तिलिस्मी खंजर है।

इन्द्र - राजा गोपालसिंह ने आपको तिलिस्मी खंजर कब दिया?

तेज - जब कमलिनी की सहायता से मैंने उन्हें मायारानी की कैद से छुड़ाया था तब उन्होंने उसी तिलिस्मी बाग के चौथे दर्जे में से एक तिलिस्मी खंजर निकालकर मुझे दिया था जिसे मैं हिफाजत से रखता हूं। कमलिनी के साथ देवीसिंह के जाने से कोई फायदा न होगा क्योंकि जब कमलिनी तिलिस्मी खंजर से काम लेगी तो उसकी चमक से और लोगों की तरह देवीसिंह की आंखें बन्द हो जायेंगी...।

इन्द्रदेव - (बात काटकर) ठीक है, ठीक है, मैं समझ गया, अच्छा तो आप ही जाइये, देर न कीजिये।

इतना कहकर इन्द्रदेव बड़ी फुर्ती से कैदखाने के अन्दर चला गया और उस कोठरी का दरवाजा जिसमें किशोरी, कामिनी, लक्ष्मीदेवी, लाडिली और कमला को रख दिया था पुनः उसी ढंग से खोला जैसे पहिले खोला था। दरवाजा खुलने के साथ ही तेजसिंह को साथ लिए हुए कमलिनी उस कोठरी के अन्दर घुस गई और वहां कामिनी, लक्ष्मीदेवी, लाडिली और कमला को मौजूद पाया मगर किशोरी का पता न था। कमलिनी ने उन औरतों को तुरंत कोठरी के बाहर निकालकर राजा वीरेन्द्रसिंह के पास चले जाने के लिये कहा और आप दूसरे काम का उद्योग करने लगी। बाकी औरतों के बाहर होते ही इन्द्रदेव ने जंजीर छोड़ दी और कोठरी का दरवाजा बन्द हो गया। कमलिनी ने अपने तिलिस्मी खंजर की रोशनी में चारों तरफ गौर से देखा।

बगल वाली दीवार में एक छोटा-सा दरवाजा खुला हुआ दिखाई दिया जिसमें ऊपर के हिस्से में जाने के लिए सीढ़ियां थीं। दोनों उस दरवाजे के अन्दर चले गये और सीढ़ियां चढ़कर छत के ऊपर पहुंचे, अब तेजसिंह को मालूम हुआ कि इसी जगह से उस गुप्त मनुष्य के बोलने की आवाज आ रही थी।

इस ऊपर वाले हिस्से की छत बहुत लम्बी-चौड़ी थी और वहां कई बड़े-बड़े दालान और उन दालानों में से कई तरफ निकल जाने के रास्ते थे। तेजसिंह और कमलिनी ने देखा कि वहां पर बहुत-सी लाशें पड़ी हैं जिनमें से शायद दो ही चार में दम हो, और जमीन भी वहां की खून से तरबतर हो रही थी। अपने पैर को खून और लाशों से बचाकर किसी तरह निकल जाना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव था। अस्तु कमलिनी ने इस बात का कुछ भी खयाल न किया और लाशों पर पैर रखती हुई बराबर चली गई। आखिर एक दालान में पहुंची जिसमें से दूसरी तरफ निकल जाने के लिए एक खुला दरवाजा था। दरवाजे के उस पार पैर रखते ही दोनों की निगाह कृष्णा जिन्न पर पड़ी जिसे दुश्मन चारों तरफ से घेरे हुए थे और वह तिलिस्मी तलवार से सभी को काटकर गिरा रहा था। यद्यपि वह तिलिस्मी फौलादी जाल की पोशाक पहिरे हुए था और इस सबब से उसके ऊपर दुश्मनों की तलवारें कुछ काम नहीं करती थीं। यद्यपि ध्यान देने से मालूम होता था कि तलवार चलाते-चलाते उसका हाथ थक गया है और थोड़ी ही देर में हर्बा चलाने या लड़ने लायक न रहेगा। इतना होने पर भी दुश्मनों को उस पर फतह पाने की आशा न थी और मुकाबला करने से डरते थे। जिस समय कमलिनी और तेजसिंह तिलिस्मी खंजर चमकाते हुए उसके पास पहुंचे उस समय दुश्मनों का जी बिल्कुल ही टूट गया और वे तलवारें जमीन पर फेंक-फेंक 'शरण', 'शरणागत' इत्यादि पुकारने लगे।

अगर दुश्मनों को यहां से निकल जाने का रास्ता मालूम होता और वे लोग भागकर अपनी जान बचा सकते तो कृष्णा जिन्न मुकाबला कदापि न करते लेकिन जब उन्होंने देखा कि हम लोग रास्ता न जानने के कारण भागकर जा ही नहीं सकते तब लाचार होकर मरने-मारने के लिए तैयार हो गये थे, मगर कृष्णा जिन्न ने भी उन लोगों को अच्छी तरह यमलोक का रास्ता दिखाया क्योंकि उसके हाथ में तिलिस्मी तलवार थी। जब तेजसिंह और कमलिनी भी तिलिस्मी खंजर चमकाते हुए वहां पहुंच गये तब तो दुश्मनों ने एकदम ही तलवार हाथ से फेंक दी और 'त्राहि-त्राहि', 'शरण-शरण' पुकारने लगे। उस समय कृष्णा जिन्न ने भी हाथ रोक लिया और तेजसिंह तथा कमलिनी की तरफ देखकर कहा - "बहुत अच्छा हुआ जो आप लोग आ गये!"

तेज - मालूम होता है कि आप ही ने दुश्मनों के आने से हम लोगों को सचेत किया।

कृष्णा - हां वह आवाज मेरी ही थी और मुझी से आप लोग बातचीत कर रहे थे।

तेज - तो क्या आप ही ने यह कहा था कि 'कोई शैतान बेचारी किशोरी को पकड़े लिए जाता है'

कृष्णा - हां, यह मैंने ही कहा था, किशोरी को ले जाने वाला स्वयं उसका बाप शिवदत्त था और मेरे हाथ से मारा गया।

कृष्णा जिन्न और भी कुछ कहा चाहता था कि कोई आवाज उसके तथा कमलिनी और तेजसिंह के कानों में पड़ी। आवाज यह थी - "हरी-हरी, तुम लोग भागो और हमारे पीछे-पीछे चले आओ, धन्नूसिंह की मदद से हम लोग निकल जायेंगे।" इस आवाज को सुनकर वे लोग भी पीछे की तरफ भाग गये जिन्होंने कृष्णा जिन्न और तेजसिंह के आगे तलवारें फेंक दी थीं मगर कृष्णा जिन्न और तेजसिंह ने उन लोगों को रोकना या मारना उचित न जाना और चुपचाप खड़े रहकर भागने वालों का तमाशा देखते रहे। थोड़ी देर में उनके सामने की जमीन दुश्मनों से खाली हो गई और सामने से आती हुई मनोरमा दिखाई पड़ी। मनोरमा को देखते ही कमलिनी तिलिस्मी खंजर उठाकर उसकी तरफ झपटी और उस पर वार किया ही चाहती थी कि मनोरमा ने कुछ पीछे हटकर कहा, "हैं हैं! श्यामा, जरा देख-समझ के!"

मनोरमा की बात और श्यामा1 का शब्द सुनकर कमलिनी रुक गई और बड़े गौर से मनोरमा का मुंह देखने के बाद बोली, "तू कौन है?'

मनोरमा - बीरूसिंह!

कमलिनी - निशान?

मनोरमा - चन्द्रकला।

कमलिनी - तुम अकेले हो या और भी कोई है?

बीरू - शिवदत्त के सिपाही धन्नूसिंह की सूरत बने हुए मेरे गुरु सर्यूसिंह भी आये हैं। उन्होंने दुश्मनों को बाहर निकालने का रास्ता बताया है। इस तहखाने में जितने दरवाजे कल्याणसिंह ने बन्द किये थे वे सब भी गुरुजी ने खोल दिये क्योंकि उनके

सामने ही कल्याणसिंह ने सब दरवाजे बन्द किये थे और उन्होंने उसकी तर्कीब देख ली थी।

कृष्णा - शाबाश! (कमलिनी से) अच्छा इन लोगों का किस्सा दूसरे समय सुनना, इस समय तुम किशोरी को लेकर राजा वीरेन्द्रसिंह के पास चली जाओ जिसे हमने शिवदत्त के पंजे से छुड़ाया है और जो (हाथ का इशारा करके) उस तरफ जमीन पर बदहवास पड़ी है, बस अब इस काम में देर मत करो। मैं यहां से पुकारकर कह देता हूं, जिस राह से तुम आई हो उस कोठरी का दरवाजा इन्द्रदेव खोल देंगे, तेजसिंह और बीरूसिंह को मैं थोड़ी देर के लिए अपने साथ लिए जाता हूं, ये लोग किले में तुम लोगों के पास आ जायेंगे।

कमलिनी - क्या आप राजा वीरेन्द्रसिंह के पास चलेंगे?

कृष्णा - नहीं।

कमलिनी - क्यों?

कृष्णा - हमारी खुशी। राजा वीरेन्द्रसिंह से कह दीजियो कि सभों को लिये हुए इसी समय तहखाने के बाहर चले जायें।

इतना कहकर कृष्णा जिन्न उस जगह कमलिनी को ले गया जहां बेचारी किशोरी बदहवास पड़ी हुई थी। दुश्मन लोग सामने से बिल्कुल भाग गये थे, सिवाय जख्मियों और मुर्दों के वहां पर कोई भी मुकाबला करने वाला न था और दुश्मनों के हाथों से गिरी हुई मशालें इधर-उधर पड़ी हुई थीं मगर तेजसिंह की तर्कीब से वह बहुत जल्दी होश में आ गई और कमलिनी उसे अपने साथ लेकर राजा वीरेन्द्रसिंह के पास चली गई। कृष्णा जिन्न ने उसी सूराख में से इन्द्रदेव को दरवाजा खोलने के लिए आवाज दे दी और तेजसिंह तथा बीरूसिंह को लिए दूसरी तरफ का रास्ता लिया।

किशोरी को साथ लिए हुये थोड़ी ही देर में कमलिनी राजा वीरेन्द्रसिंह के पास जा पहुंची और जो कुछ उसने देखा-सुना था सब कहा। वहां से भी बचे-बचाये दुश्मन लोग भाग गये थे और मुकाबला करने वाला कोई मौजूद नहीं था।

इन्द्रदेव - (राजा वीरेन्द्रसिंह से) कृष्णा जिन्न ने जो कुछ कहला भेजा है उसे मैं पसन्द करता हूं, सभों को लेकर इतने समय तहखाने के बाहर ही हो जाना चाहिए।

वीरेन्द्र - मेरी भी यही राय है, ईश्वर को धन्यवाद देना चाहिए कि आज की ग्रहदशा सहज में कट गई। निःसन्देह आपके दोनों ऐयारों ने दुश्मनों के साथ यहां आकर कोई अनूठा काम किया होगा और कृष्णा जिन्न ने मानो पूरी सहायता ही की और किशोरी की जान बचाई।

इन्द्र - निःसन्देह ईश्वर ने बड़ी कृपा की मगर इस बात का अफसोस है कि कृष्णा जिन्न यहां न आकर ऊपर ही ऊपर चले गये और मैं उन्हें देख न सका तथा इस तहखाने की सैर भी इस समय आपको न करा सका।

वीरेन्द्र - कोई चिन्ता नहीं फिर देखा जायेगा इस समय तो यहां से चल ही देना चाहिए।

राजा वीरेन्द्रसिंह की इच्छानुसार कैदियों को भी साथ लिये हुए सब कोई तहखाने के बाहर हुए। कैदियों को कैदखाने भेजा, औरतें महल में भेज दी गईं और उनकी हिफाजत का विशेष प्रबन्ध किया गया, क्योंकि अब राजा वीरेन्द्रसिंह को इस बात का विश्वास न रहा कि रोहतासगढ़ किले के अन्दर और महल में दुश्मनों के आने का खटका नहीं है क्योंकि तहखाने के रास्तों का हाल दिन - दिन खुलता ही जाता था।

इन्द्रदेव को राजा वीरेन्द्रसिंह ने अपने कमरे के बगल में डेरा दिया और बड़ी इज्जत के साथ रक्खा। आज की बची हुई रात सोच-विचार और तरद्दुद ही में बीती। शेरअलीखां, भूतनाथ और कल्याणसिंह का हाल भी सभों को मालूम हुआ और यह भी मालूम हुआ कि कल्याणसिंह और उसके कई आदमी कैदखाने में बन्द हैं।

दूसरे दिन सबेरे जब राजा वीरेन्द्रसिंह ने कैदखाने में से कल्याण को अपने पास बुलाया तो मालूम हुआ कि रात ही को होश में आने के बाद कल्याणसिंह ने जमीन पर सिर पटककर अपनी जान दे दी। वीरेन्द्रसिंह ने उसकी अवस्था पर शोक प्रकट किया और उसकी लाश को इज्जत के साथ जलाकर हड्डियां गंगाजी में डलवा देने का हुक्म दिया और यही हुक्म शिवदत्त की लाश के लिए भी दिया।

पहर दिन चढ़ने के बाद जब राजा वीरेन्द्रसिंह स्नान और संध्या-पूजा से छुट्टी पा कुछ फल खाकर निश्चिन्त हुए तो महल में अपने आने की इत्तिला करवाई और उसके बाद इन्द्रदेव को साथ लिये हुए महल में जाकर एक सजे हुए सुन्दर कमरे में बैठे। उनकी इच्छानुसार किशोरी, कामिनी, कमला, कमलिनी, लाडिली और लक्ष्मीदेवी अदब के साथ सामने बैठ गईं। किशोरी का चेहरा उसके बाप के गम में उदास हो रहा था, राजा वीरेन्द्रसिंह ने उसे समझाया और दिलासा दिया। इसी समय

तारासिंह ने राजा साहब के पास पहुंचकर तेजसिंह, भूतनाथ, सर्यूसिंह और बीरूसिंह के आने की इत्तिला की और मर्जी होने पर ये लोग राजा वीरेन्द्रसिंह के सामने हाजिर हुए तथा सलाम करने के बाद हुक्म पाकर जमीन पर बैठ गये। इन लोगों के आने का सभों को इन्तजार था, शिवदत्त और कल्याणसिंह की कार्रवाई तथा उनके काम में विघ्न पड़ने का हाल सभी कोई सुना चाहते थे।

वीरेन्द्र - (भूतनाथ से) सुना था कि शेरअलीखां को तुम अपने साथ ले गए थे?

भूत - जी हां, शेरअलीखां को मैं अपने साथ ले गया था और साथ लेता भी आया, तेजसिंह की आज्ञा से वह अपने डेरे पर चले गए जहां रहते थे।

वीरेन्द्र - (तेजसिंह से) कृष्णा जिन्न तुमको अपने साथ क्यों ले गए थे?

तेज - कुछ काम था जो मैं आपसे किसी दूसरे समय कहूंगा, आप पहिले सर्यूसिंह और भूतनाथ का हाल सुन लीजिये।

वीरेन्द्र - अच्छी बात है, आज के मामले में निःसन्देह सर्यूसिंह ने बड़ी मदद पहुंचाई और भूतनाथ की होशियारी ने भी दुश्मनों का बहुत कुछ नुकसान किया।

तेज - जिस तरफ से दुश्मन लोग इस तहखाने के अन्दर आये थे भूतनाथ और शेरअलीखां उसी मुहाने पर जाकर बैठ गए और भागकर जाते हुए दुश्मनों को खूब ही मारा, यहां तक कि एक भी जीता बचकर न जा सका।

इन्द्र - (सर्यूसिंह से) अच्छा तुम अपना हाल कह जाओ।

इन्द्रदेव की आज्ञा पाकर सर्यूसिंह ने अपना और भूतनाथ का हाल बयान किया। मनोरमा और धन्नूसिंह का हाल सुनकर सब कोई हंसने लगे, इसके बाद भूतनाथ का मनोरमा को अपने लड़के नानक के साथ घर भेजकर शेरअलीखां के पास आना, कल्याणसिंह और उसके आदमियों का मुकाबिला करना, फिर शेरअलीखां को अपने साथ लेकर सुरंग के मुहाने पर जाकर बैठना और दुश्मनों का सत्यानाश करना इत्यादि बयान किया। इसके बाद तेजसिंह ने एक चीठी राजा वीरेन्द्रसिंह के हाथ में दी और कहा, "कृष्णा जिन्न ने यह चीठी आपके लिए दी है।"

राजा वीरेन्द्रसिंह ने यह चीठी ले ली और मन में पढ़ जाने के बाद इन्द्रदेव के हाथ में देकर कहा - "आप इसे जोर से पढ़ जाइये जिससे सब कोई सुन लें!"

इन्द्रदेव ने चीठी पढ़कर सभों को सुनाई। उसका मतलब यह था -

"इत्तिफाक से आज इस तहखाने में पहुंच गया और किशोरी की जान बच गई। सर्यूसिंह और भूतनाथ ने निःसन्देह बड़ी मदद की, सच तो यों है कि आज उन्हीं की बदौलत दुश्मनों ने नीचा देखा, मगर भूतनाथ ने एक काम बड़ी बेवकूफी का किया, अर्थात् मनोरमा को नानक के हाथ दे दिया और उसे घर ले जाकर असली बलभद्रसिंह का पता लगाने के लिए कहा। यह भूतनाथ की भूल है कि वह नानक को किसी काम के लायक समझता है यद्यपि नानक के हाथ से आज तक कोई काम ऐसा न निकला जिसकी तारीफ की जाय, वह निरा बेवकूफ और गदहा है। कोई नाजुक काम उसके हाथ में देना भी भारी भूल है। मनोरमा को उसके हाथ में देकर भूतनाथ ने बुरा किया। नानक कमीने को मालिक के काम का तो कुछ खयाल न रहा और मनोरमा के साथ शादी की धुन सवार हो गई, जिसका नतीजा यह निकला कि मनोरमा ने नानक को खूब जूतियां लगाईं और तिलिस्मी खंजर भी ले लिया, मैं बहुत खुश होता यदि मनोरमा नानक के कान-नाक भी काट लेती। आपको और आपके ऐयारों को होशियार करता हूं और कहे देता हूं कि औरत के गुलाम नानक बेईमान पर कोई भी कभी भरोसा न करें। आप जरूर अपने एक ऐयार को नानक के घर की तहकीकात करने के लिए भेजें, तब आपको नानक और नानक के घर की हालत मालूम होगी। अस्तु अब आपका रोहतासगढ़ में रहना ठीक नहीं है, आप कैदियों और किशोरी, कामिनी, कमलिनी और लक्ष्मीदेवी इत्यादि सभों को लेकर चुनार चले जायें। मैं यह बात इस खयाल से नहीं कहता कि यहां आपको दुश्मनों का डर है, नहीं-नहीं, अव्वल तो अब आपका कोई ऐसा दुश्मन ही नहीं रहा जो रोहतासगढ़ तहखाने का रत्ती बराबर भी हाल जानता हो, दूसरे इस तहखाने के कुल दरवाजे (दीवानखाने वाले एक सदर दरवाजे को छोड़कर) जो गिनती में ग्यारह थे मैंने अच्छी तरह बन्द कर दिये और उनका हाल तेजसिंह को बता दिया है। मैं समझता हूं इनसे ज्यादे रास्ते तहखाने में आने-जाने के लिए नहीं हैं, इतने रास्तों का हाल यहां का राजा दिग्विजयसिंह भी न जानता होगा, हां कमलिनी जरूर जानती होगी क्योंकि वह 'रक्तग्रंथ' पढ़ चुकी है। यदि आप तहखाने की सैर किया चाहते हैं तो इस इरादे को अभी रोक दीजिये, कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के आने पर यह काम कीजियेगा, क्योंकि यहां का सबसे ज्यादे हाल उन्हीं दोनों भाइयों को मालूम होगा। हां बलभद्रसिंह का पता लगाने का उद्योग करना चाहिए और यहां के तहखाने की भी अच्छी तरह सफाई हो जानी चाहिए जिससे एक भी मुर्दा इसके अन्दर रह न जाय। यदि इन्द्रदेव चाहें तो नकली बलभद्रसिंह को आप इन्द्रदेव के हवाले कर दीजियेगा और असली बलभद्रसिंह तथा इन्दिरा का पता लगाने का बोझ

इन्द्रदेव ही के ऊपर डालियेगा। भूतनाथ को भी चाहिए कि इन्द्रदेव के साथ रहकर अपनी खैरख्वाही दिखाये और पुरानी कालिख अपने चेहरे से अच्छी तरह धो डाले, नहीं तो उसके हक में अच्छा न होगा और आप अपने एक ऐयार को हरामखोर नानक की तरफ रवाना कीजिये। मैं आपका ध्यान पुनः मनोरमा की तरफ दिलाता हूं और कहता हूं कि तिलिस्मी खंजर का उसके हाथ लग जाना ही बुरा हुआ। मनोरमा साधारण औरत नहीं है, उसकी तारीफ आप सुन ही चुके होंगे, तिलिस्मी खंजर पाकर अब वह जो न कर डाले वही आश्चर्य है। उसके कब्जे से खंजर निकालने का शीघ्र उद्योग कीजिये और इस काम को सबसे ज्यादे जरूरी समझिये। इसके अतिरिक्त तेजसिंह की जुबानी जो कुछ मैंने कहला भेजा है उस पर भी ध्यान दीजिये।"

इस चीठी को सुनकर सभी को ताज्जुब हुआ। राजा वीरेन्द्रसिंह तो चुप ही रहे, सिर्फ इन्द्रदेव के हाथ से चीठी लेकर तेजसिंह को दे दी और बोले कि 'सब काम इसी के मुताबिक होना चाहिए'। इसके बाद एक-एक के चेहरे को गौर से देखने लगे। भूतनाथ का चेहरा मारे क्रोध के लाल हो रहा था, नानक की अवस्था और नालायकी पर उसे बड़ा ही रंज हुआ था। लक्ष्मीदेवी के चेहरे पर भी हद से ज्यादे उदासी छाई हुई थी, बाप की फिक्र के साथ ही साथ उसे इस बात का बड़ा रंज और ताज्जुब था कि राजा गोपालसिंह ने सब हाल सुनकर भी उसकी कुछ खबर न ली, न तो मिलने के लिए आये और न कोई चीठी ही भेजी। वह हजार सोचती और गौर करती थी मगर इसका सबब कुछ भी उसके ध्यान में न आता था और न उसका दिल इसी बात को कबूल करता था कि राजा गोपालसिंह उसे इसी अवस्था में छोड़ देंगे। ज्यादे ताज्जुब तो उसे इस बात का था कि राजा गोपालसिंह ने मायारानी के बारे में भी कोई हुक्म नहीं लगाया जिसकी बदौलत वह हद से ज्यादे तकलीफ उठा चुके थे। अब इस खयाल ने उसे और सताना शुरू किया कि हम लोगों को चुनार जाना होगा जहां गोपालसिंह का पहुंचना और भी कठिन है, इत्यादि तरह-तरह की बातें वह सोच रही थी और न रुकने वाले आंसुओं को रोकने में जी-जान से उद्योग कर रही थी। कमलिनी का चेहरा भी उदास था, राजा गोपालसिंह के विषय में वह भी तरह-तरह की बातें सोच रही थी और उनसे तथा नानक से स्वयं मिला चाहती थी मगर राजा वीरेन्द्रसिंह की मर्जी के खिलाफ कुछ करना भी उचित नहीं समझती थी।

राजा वीरेन्द्रसिंह ने इन्द्रदेव की तरफ देखकर कहा, "आप क्या सोच रहे हैं कृष्णा जिन्न पर मुझे बड़ा विश्वास है और उसने जो कुछ लिखा मैं उसे करने के लिए तैयार हूं।"

इन्द्रदेव - आप मालिक हैं, आपको हर तरह पर अख्तियार है जो चाहे करें और मुझे भी जो आज्ञा दें करने के लिए तैयार हूं। कृष्णा जिन्न की तो मैंने सूरत भी नहीं देखी है इसलिए उनके विषय में कुछ भी नहीं कह सकता, मगर मुझे अफसोस इस बात का है कि मैं यहां आकर कुछ भी न कर सका, न तो बलभद्रसिंह ही का पता लगा और न इन्दिरा के विषय में ही कुछ मालूम हुआ।

वीरेन्द्र - नकली बलभद्रसिंह जब तुम्हारे कब्जे में हो जाएगा तो मैं उम्मीद करता हूं कि तुम इन दोनों ही का पता लगा सकोगे और कृष्णा जिन्न के लिखे मुताबिक मैं नकली बलभद्रसिंह को तुम्हारे हवाले करने के लिए तैयार हूं। मैं तुम पर भी बहुत विश्वास रखता हूं और तुम्हें अपना समझता हूं और कृष्णा जिन्न ने न भी लिखा होता और तुम नकली बलभद्रसिंह मांगते तो भी मैं तुम्हें दे देता, अब भी अगर तुम मायारानी या दारोगा को लिया चाहो तो मैं देने को तैयार हूं। केवल इतना ही नहीं इसके अतिरिक्त तुम अगर और भी कोई बात कहो तो करने के लिए तैयार हूं।

राजा वीरेन्द्रसिंह की बात सुनकर इन्द्रदेव उठ खड़ा हुआ और झुककर सलाम करने के बाद हाथ जोड़कर बोला, "यह जानकर बहुत ही प्रसन्न हुआ कि महाराज मुझ पर विश्वास रखते हैं और नकली बलभद्रसिंह को मेरे हवाले करने के लिए तैयार हैं तथा और भी जिसे मैं चाहूं ले जाने की प्रार्थना कर सकता हूं। यदि महाराज की मुझ पर इतनी कृपा है तो मैं कह सकता हूं कि सिवाय नकली बलभद्रसिंह के और किसी कैदी को ले जाना नहीं चाहता मगर लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली को अपने साथ ले जाने की प्रार्थना करता हूं। अपनी धर्म की प्यारी लड़की लक्ष्मीदेवी पर बहुत स्नेह रखता हूं और अभी बहुत उसके हाथ से... (रुककर) हां तो यदि महाराज मुझ पर विश्वास कर सकते हैं तो इन लोगों को और कलमदान को मुझे दे दें जिस पर 'इन्दिरा' लिखा हुआ है। भूतनाथ कागजात अपने साथ लेते जायें, मैं असली बलभद्रसिंह का पता लगाकर सेवा में उपस्थित होऊंगा और उस समय अपने सामने भूतनाथ के मुकद्दमे का फैसला कराऊंगा। आप भूतनाथ को आज्ञा दें कि कृष्णा जिन्न ने उसके विषय में जो कुछ लिखा है उसे नेकनीयती के साथ पूरा करें।"

इन्द्रदेव की बात सुनकर राजा वीरेन्द्रसिंह गौर में पड़ गये। वे लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली को अपने साथ चुनार ले जाया चाहते थे और कृष्णा जिन्न ने ऐसा करने को लिखा था मगर इन्द्रदेव की अर्जी भी नामंजूर नहीं कर सकते थे क्योंकि इन्द्रदेव का लक्ष्मीदेवी पर हक था और उसी ने लक्ष्मीदेवी की रक्षा की थी। कमलिनी और लाडिली पर राजा वीरेन्द्रसिंह का कोई अधिकार न था क्योंकि वे बिल्कुल

स्वतन्त्र थीं। वीरेन्द्रसिंह ने कुछ देर तक गौर करने बाद के इन्द्रदेव से कहा, "मुझे कुछ उज्र नहीं है, लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली यदि आपके साथ रहने में प्रसन्न हैं तो आप उन्हें ले जायें और वह कलमदान भी आपको मिल जायगा।"

इन्द्रदेव और राजा वीरेन्द्रसिंह की बातें सुनकर लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली बहुत प्रसन्न हुईं और हाथ जोड़कर राजा वीरेन्द्रसिंह से बोलीं, "हम लोग अपने धर्म के पिता इन्द्रदेव के घर जाने में बहुत प्रसन्न हैं, वहां हमें अपने बाप का पता लगाने का हाल बहुत जल्द मिलेगा।"

वीरेन्द्र - बहुत अच्छा, (तेजसिंह से) वह कलमदान इन्द्रदेव को दे दो और इन लोगों के तथा नकली बलभद्रसिंह के जाने का बन्दोबस्त करो। हम भी आज चुनारगढ़ की तरफ कूच करेंगे। भैरोसिंह को मनोरमा की गिरफ्तारी के लिए रवाना करो और तारासिंह को नानक के घर भेजो। (देवीसिंह की तरफ देखकर) एक बहुत ही नाजुक काम तुम्हारे सुपुर्द करने की इच्छा है जो तुम्हारे कान में कहेंगे।

देवीसिंह राजा वीरेन्द्रसिंह के पास चले गये और उनकी तरफ सिर झुका दिया। वीरेन्द्रसिंह ने देवीसिंह के कान में कहा, "लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली की निगहबानी तुम्हारे जिम्मे मगर गुप्त।"

देवीसिंह सलाम करके पीछे हट गए और दरबार बर्खास्त हो गया।

बयान - 3

शेरअलीखां बड़ी इज्जत और आबरू के साथ घर भेजे गये, उनके सेनापति महबूबखां को भी छुट्टी मिली, भैरोसिंह मनोरमा की फिक्र में गए, तारासिंह नानक के घर चले और कुछ फौजी सिपाहियों के साथ नकली बलभद्रसिंह, लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली को लिये हुए इन्द्रदेव ने अपने गुप्त स्थान की तरफ प्रस्थान किया। भूतनाथ बातें करता हुआ उन्हीं के साथ चल पड़ा और थोड़ी दूर जाने के बाद आज्ञा लेकर अपने अड्डे की तरफ रवाना हुआ जो बराबर की पहाड़ी पर था और देवीसिंह ने न मालूम किधर का रास्ता लिया। राजा वीरेन्द्रसिंह की सवारी भी उसी दिन चुनारगढ़ की तरफ चली और तेजसिंह राजा साहब के साथ गये।

हम सबके पहिले तारासिंह के साथ चलकर नानक के घर पहुंचते हैं और उसकी जगतप्रिय स्त्री की अवस्था पर ध्यान देते हैं। इसमें कोई शक नहीं कि लड़कपन में नानक उत्साही था और उसे नाम पैदा करने की बड़ी लालसा थी परन्तु रामभोली के

प्रेम ने उसका खयाल बदल दिया और उसमें खुदगर्जी का हिस्सा कुछ ज्यादे हो गया। आखीर में जब उसने श्यामा नामी एक स्त्री से शादी कर ली जिसका जिक्र कई दफे लिखा जा चुका है, तब से तो उसकी बुद्धि बिल्कुल ही भ्रष्ट हो गई। नानक की स्त्री श्यामा बड़ी चतुर, लालची और कुलटा थी मगर नानक उसे पतिव्रता और साध्वी जानकर माता के समान उसकी इज्जत करता था। नानक के नातेदार और दोस्तों की आमदरफ्त उसके घर में विशेष थी। श्यामा को रुपये-पैसे की कमी न थी और वह अपनी दौलत जमीन के अन्दर गाड़कर रक्खा करती थी जिसका हाल सिवाय एक नौजवान खिदमतगार के जिसका नाम हनुमान था और कोई भी नहीं जानता था। हनुमान यद्यपि नानक का नौकर था परन्तु इस सबब से कि उसकी मां कुछ दिनों तक भूतनाथ की खिदमत में रह चुकी थी वह अपने को नौकर नहीं समझता था बल्कि घर का मालिक समझता था। नानक की स्त्री उसे बहुत चाहती थी। यहां तक कि एक दिन उसने अपने मुंह से उसे अपना देवर स्वीकार किया था। इस सबब से वह और भी सिर चढ़ गया था। नानक के यहां एक मजदूरनी भी थी, वह नानक के काम की चाहे न हो मगर उसकी स्त्री के लिए उपयोगी पात्र थी और उसके द्वारा नानक की स्त्री का बहुत काम निकलता था।

तारासिंह अपने दो चेलों को साथ लिए रोहतासगढ़ से रवाना होकर भेष बदले हुए तीसरे ही दिन नानक के घर पहुंचा। ठीक दोपहर का समय था और नानक अपने किसी दोस्त के यहां गया हुआ था, मगर उसका प्यारा खिदमतगार हनुमान दरवाजे पर बैठा अपने पड़ोसी साईसों, कोचवानों के साथ गप्पें लड़ा रहा था। तारासिंह थोड़ी देर तक इधर-उधर टहलता और टोह लेता रहा। जब उसे मालूम हो गया कि हनुमान नानक का प्यारा नौकर है और उम्र में भी अपने से बड़ा नहीं है तो वहां से लौट और कुछ दूर जाकर किसी सुनसान अंधेरी गली में मकान किराए पर लेने का बन्दोबस्त करने लगा। संध्या होने के पहिले ही इस काम में भी निश्चिन्ती हो गई अर्थात् उसने एक बहुत बड़ा मकान किराये पर ले लिया जो मुद्दत से खाली पड़ा हुआ था क्योंकि लोग उसे भूत-प्रेतों का वास समझते थे और कोई उसमें रहना पसन्द नहीं करता था। उसमें जाने के लिए तीन रास्ते थे और उसके अन्दर कई कोठरियां ऐसी थीं कि यदि उसमें किसी को बन्द कर दिया जाय तो हजार चिल्लाने और ऊधम मचाने पर भी किसी बाहर वाले को खबर न हो। तारासिंह ने उसी मकान में डेरा जमाया और बाजार आकर दो ही घण्टे में वे सब चीजें खरीद लाया जिनकी उसने जरूरत समझी और जो एक अमीराना ढंग से रहने वाले आदमी के लिए आवश्यक थीं। इस काम से भी छुट्टी पाकर उसने मोमबत्ती जलाई और आईना तथा ऐयारी का बटुआ सामने रखकर अपनी सूरत बदलने का उद्योग करने लगा। शीघ्र ही एक खूबसूरत नौजवान

अमीर की सूरत बनाकर वह घर से बाहर निकला और मकान में एक चेले को छोड़कर नानक के घर की तरफ रवाना हुआ। दूसरा चेला जो तारासिंह के साथ था उसे बहुत-सी बातें समझाकर दूसरे काम के लिए भेजा।

जब तारासिंह नानक के मकान पर पहुंचा तो उसने हनुमान को दरवाजे पर बैठा पाया। इस समय हनुमान अकेला था और हुक्का पीने का बन्दोबस्त कर रहा था। उसके पास ही ताक (आला) पर एक चिराग जल रहा था जिसकी रोशनी चारों तरफ फैल रही थी। तारासिंह हनुमान के पास जाकर खड़ा हो गया। हनुमान ने बड़े गौर से उसकी सूरत देखी और रोब में आकर हुक्का छोड़के खड़ा हो गया। उस समय चिराग की रोशनी में तारासिंह बड़े शान-शौकत का आदमी मालूम पड़ रहा था। खूबसूरती बनाने की तारासिंह को जरूरत न थी क्योंकि वह स्वयं खूबसूरत और नौजवान आदमी था परन्तु रूप बदलने की नीयत से उसने अपने चेहरे पर रोगन जरूर लगाया था जिससे वह इस समय और भी खूबसूरत और शौकीन जंच रहा था।

तारासिंह को देखते ही हनुमान उठ खड़ा हुआ और हाथ जोड़कर बोला, "हुक्म!"

तारा - हमारे साथ एक नौकर था वह राह भूलकर न मालूम कहां चला गया। उम्मीद थी कि वह हमको ढूंढ़ने के बाद सीधा घर पर चला जायगा, मगर इस समय प्यास के मारे हमारा गला सूखा जा रहा है।

हनुमान - (एक छोटी चौकी की तरफ इशारा करके) सरकार इस चौकी पर बैठ जायें मैं अभी पानी लाता हूं।

इतना सुनकर तारासिंह चौकी पर बैठ गया और हनुमान पानी लाने के लिए अन्दर चला गया। थोड़ी ही देर में पानी का भरा हुआ एक लोटा और गिलास लिए हनुमान बाहर आया और तारासिंह को पीने के लिए पानी गिलास में डालकर दिया। उस समय तारासिंह ने दरवाजे का पर्दा हिलते हुए देखा और यह भी मालूम किया कि कोई औरत भीतर से झांक रही है। पानी पीने के बाद तारासिंह ने पांच रुपये हनुमान के हाथ में दिये और वहां से उठकर दूसरी तरफ का रास्ता लिया।

हनुमान केवल एक गिलास पानी पिलाने के बदले में पांच रुपये पाकर बड़ा ही प्रसन्न हुआ और दाता की अमीरी पर आश्चर्य करने लगा। उसे विश्वास हो गया कि यह कोई बड़ा अमीर आदमी या कोई राजकुमार है और साथ ही इसके दिल का अमीर तथा जी खोलकर देने वाला भी है।

दूसरे दिन संध्या के पहिले ही हनुमान ने तारासिंह को अपने दरवाजे के सामने से जाते देखा और उसके साथ एक नौकर को भी देखा जो बड़े शान के साथ कीमती कपड़े पहिरे और तलवार लगाए तारासिंह के पीछे-पीछे जा रहा था। हनुमान ने उठकर तारासिंह को बड़े अदब के साथ सलाम किया। तारासिंह ने अपने नौकर को जो वास्तव में उसका चेला था कुछ कहकर हनुमान के पास छोड़ा और आगे का रास्ता लिया।

तारासिंह के नौकर में और हनुमान में दो घण्टे तक खूब बातचीत हुई जिसे हम यहां लिखना नापसन्द करते हैं, हां इस बातचीत का जो कुछ नतीजा निकला वह अवश्य दिखाया जायेगा क्योंकि नानक के घर की जांच करने ही के लिए तारासिंह का आना इस शहर में हुआ था।

बहुत देर तक बातचीत करने के बाद तारासिंह का नौकर उठ खड़ा हुआ और हनुमान के हाथ में कुछ देकर घर का रास्ता लिया जहां तारासिंह उसके आने का इन्तजार कर रहा था। जब तारासिंह ने नौकर को आते देखा तो पूछा -

तारा - कहो क्या हुआ?

नौकर - सब ठीक है, वह तो आपको देख भी चुकी है।

तारा - हां, रात को जब मैं वहां पानी पी रहा था, टाट का पर्दा हिलते हुए देखा था, तो और भी कुछ हालचाल मालूम हुआ

नौकर - जी हां, बड़ी-बड़ी बातें हुईं, वह तो पूरी खानगी है, कल दोपहर के पहिले मैं आपको उन लोगों के नाम भी बताऊंगा जिनसे उसका ताल्लुक है और उम्मीद है कि कल वह स्वयं बन-ठनकर आपके पास आवे।

तारा - ठीक है, तो क्या तुम्हें उसका नाम भी मालूम हुआ?

नौकर - जी हां, उसका नाम श्यामा है और अपने पति अर्थात् नानक के लिए तो वह रूपगर्विता नायिका है।

तारा - बड़े अफसोस की बात है। निःसन्देह भूतनाथ के लिए यह एक कलंक है। ऐसी औरत का पति इस योग्य नहीं कि हम लोग उसे अपने पास बैठावें या उसका छुआ पानी भी पीएं। खैर अब तुम घर में बैठो मैं गश्त लगाने के लिए जाता हूं।

दूसरे दिन दोपहर के समय तारासिंह का वही नौकर नानक के घर से निकला तथा इधर-उधर से घूमता-फिरता तारासिंह के पास आया और बोला, "आज श्यामा के कई प्रेमियों के नाम मैं लिख लाया हूं।"

तारा - अच्छा बताओ तो सही शायद उन लोगों में से किसी को मैं जानता होऊं या किसी का नाम भी सुना हो।

नौकर - श्यामा के एक प्रेमी का नाम 'जलशायी बाबू' है।

तारा - (गौर करके) जलशायी बाबू को तो मैं जानता हूं, वे तो बड़े नेक और बुद्धिमान हैं।

नौकर - जी हां, वही लम्बे और गोरे से, वे तरह-तरह के कपड़े राजधानी से लाकर उसे दिया करते हैं और दूसरे प्रेमी का नाम 'त्रिभुवन नायक' है और उन्हें महत्त्व की पदवी भी है, और तीसरे प्रेमी का नाम 'मायाप्रसाद' है जो राजा साहब के कोषाध्यक्ष हैं, और चौथे प्रेमी का नाम 'आनन्दवन बिहारी' है। और पांचवें...

तारा - बस - बस-बस, मैं विशेष नाम सुनना पसन्द नहीं करता।

नौकर - जो हुक्म, (एक कागज दिखाकर) मैं तो पचीसों नाम लिख लाया हूं।

तारा - ठीक है, तुम इस फिहरिस्त को अपने पास रक्खो, आवश्यकता पड़ने पर महाराज को दिखाई जायगी, हमारा काम तो उसके आज यहां आ जाने से ही निकल जायगा।

नौकर - जी हां, आज वह यहां जरूर आवेगी, हनुमान मेरे साथ आकर घर देख गया है।

बयान - 4

रात लगभग घण्टे भर के जा चुकी है। नानक के घर में उसकी स्त्री शृंगार कर चुकी है और कपड़े बदलने की तैयारी कर रही है। वह एक खुले हुए संदूक के पास खड़ी तरह-तरह की साड़ियों पर नजर दौड़ा रही है और उनमें से एक साड़ी इस समय पहिरने के लिए चुना चाहती है। हाथ में चिराग लिए हुए हनुमान उसके पास खड़ा है।

हनुमान - मेरी प्यारी भावज, यह काली साड़ी बड़ी मजेदार है, बस इसी को निकाल लो और यह चोली भी अच्छी है।

श्यामा - नहीं यह मुझे पसन्द नहीं, मगर तू घड़ी-घड़ी मुझे भावज क्यों कहता है?

हनुमान - क्या तुम मेरी भावज नहीं हो?

श्यामा - भावज तो जरूर हूं, यदि तू दूसरी मां का बेटा होता तो हमारी आधी दौलत बंटवा लेता और ऐसा न होने पर भी मैं तुझे देवर समझती हूं, मगर भावज पुकारने की आदत अच्छी नहीं, अगर कोई सुन लेगा तो क्या कहेगा!

हनुमान - यहां इस समय सुनने वाला कौन है?

श्यामा - इस समय यहां कोई न हो मगर पुकारने की आदत पड़ी रहने से कभी न कभी किसी के सामने...।

हनुमान - नहीं-नहीं, मैं ऐसा बेवकूफ नहीं हूं, देखो इतने दिनों से मुझसे तुमसे गुप्त प्रेम है मगर आज तक किसी को मालूम न हुआ। अच्छा देखो यह साड़ी बढ़िया है इसको जरूर पहिरो।

श्यामा - अरे बाबा, इस साड़ी को तो देखते ही मुझे क्रोध आता है। उस दिन यह साड़ी पहिरकर मैं बिरादरी में उनके यहां गई थी, बस एक ने झट से टोक ही तो दिया, कहने लगी कि 'यह साड़ी फलाने की दी हुई है'। इतना सुनते ही मैं लाल हो गई मगर कर क्या सकती थी क्योंकि बात सच थी, आखिर चुपचाप उठकर अपने घर चली आई। मैं यह साड़ी कभी नहीं पहिरूंगी।

हनुमान - अच्छा यह हरी साड़ी पहिरो।

श्यामा - हां, इसे पहिरूंगी और यह चोली।

हनुमान - लाओ चोली मैं पहिरा दूं।

श्यामा - (हनुमान के गाल पर चपत लगाकर) चल दूर हो।

हनुमान - (चौंककर) अरे हां, देखो तो सही कैसी भूल हो गई।

श्यामा - (ताज्जुब से) सो क्या?

हनुमान - तुम्हें तो मर्दाना कपड़ा पहिरके चलना चाहिए।

श्यामा - हां, है तो ऐसा ही, मगर वहां क्या करूंगी?

हनुमान - यह साड़ी मैं बगल में दबाकर लिये चलता हूं, वहां पहिर लेना।

श्यामा - अच्छा यही सही।

थोड़ी देर बाद मर्दाने कपड़े पहिरे और सिर पर मुड़ासा बांधे हुए श्यामा सड़क पर दिखाई देने लगी। आगे-आगे उसका प्यारा नौकर हनुमान बगल में कपड़े की गठरी दबाए हुए जा रहा था। इस जगह से वह मकान बहुत दूर न था जिसमें तारासिंह ने डेरा डाला था इसलिए थोड़ी ही देर में वे दोनों उस मकान के पिछले दरवाजे पर जा पहुंचे। दरवाजा खुला हुआ था, और तारासिंह का नौकर पहिले ही से दरवाजे पर बैठा हुआ था। उसने दोनों को मकान के अन्दर करके दरवाजा बन्द कर लिया।

तारासिंह एक कोठरी के अन्दर फर्श पर बैठा हुआ तरह-तरह की बातों पर विचार कर रहा था जब उसके नौकर ने पहुंचकर श्यामा के आने की इत्तिला की और कहा कि वह मर्दानी पोशाक पहिरकर आ गई है और अब पूरब वाले कमरे में कपड़े बदल रही है।

तारासिंह का नौकर (चेला) तो इतना कहकर चला गया मगर तारासिंह बड़े फेर में पड़ गया। वह सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिए उसके चाल-चलन का पता तो पूरा-पूरा लग गया मगर अब उसे यहां से क्योंकर टालना चाहिए। उसके साथ अधर्म करना तो उचित न होगा, हम ऐसा कदापि नहीं कर सकते, मगर अफसोस! वाह रे निर्लज्ज नानक, क्या तुझे इन बातों की खबर न होगी जरूर होगी, तू इन सब बातों को जरूर जानता होगा मगर आमदनी का रास्ता खुला देख बेहयाई की नकाब डाले बैठा है। परन्तु भूतनाथ को इन बातों की खबर नहीं, वह हयादार आदमी है। अपनी थोड़ी-सी भूल के लिए कैसे-कैसे उद्योग कर रहा है, और तेरी यह दशा! लानत है तेरी औकात पर और तुफ्र है तेरी शौकीनी पर!

तारासिंह इन बातों को सोच ही रहा था कि श्यामारानी मटकती हुई उसके पास जा पहुंची। तारासिंह ने बड़ी खातिर से उसे अपने पास बैठाया और उसके रूप-गुण की प्रशंसा करने लगा।

श्यामारानी को बैठे अभी कुछ भी देर न हुई थी कि कोठरी के बाहर से चिल्लाने की आवाज आई। यह आवाज नानक के प्यारे नौकर हनुमान की थी और साथ ही उसके किसी औरत के बोलने की आवाज आ रही थी।

बयान - 5

किशोरी, कामिनी, कमला इत्यादि तथा और बहुत से आदमियों को लिए हुए राजा वीरेन्द्रसिंह चुनार की तरफ रवाना हुए। किशोरी और कामिनी की खिदमत के लिए साथ में एक सौ पन्द्रह लौंडियां थीं जिनमें से बीस लौंडियां तो उनमें से थीं जो राजा दिग्विजयसिंह की रानी के साथ रोहतासगढ़ में रहा करती थीं और रोहतासगढ़ के फतह हो जाने के बाद राजा वीरेन्द्रसिंह की ताबेदारी स्वीकार कर चुकी थीं, बाकी लौंडियां नई रक्खी गई थीं। इसके अतिरिक्त रोहतासगढ़ से बहुत चीजें भी राजा वीरेन्द्रसिंह ने साथ ले ली थीं जिन्हें उन्होंने बेशकीमती या नायाब समझा था। रवाना होने के समय राजा साहब ने उन ऐयारों को भी चुनारगढ़ जाने की इत्तिला दिलवा दी थी जो राजगृह तथा गयाजी का इन्तजाम करने के लिए मुकर्रर किये गये थे।

जिस समय राजा वीरेन्द्रसिंह चुनारगढ़ की तरफ रवाना हुए रात घण्टे भर से कुछ ज्यादे बाकी थी और पांच हजार फौज के अतिरिक्त चार हजार दूसरे काम-काज के आदमी भी साथ में थे। इसी भीड़ में मिली-जुली साधारण लौंडी का भेष धारण किये मनोरमा भी जाने लगी। उसे अपना काम पूरा होने की पक्की उम्मीद थी और वह इस धुन में लगी हुई थी कि किशोरी और कामिनी की लौंडियों में से कोई लौंडी किसी तरह पीछे रह जाय तो काम चले।

पहर दिन चढ़े तक राजा वीरेन्द्रसिंह का लश्कर बराबर चलता गया। जब धूप हुई तो एक हरे-भरे जंगल में पड़ाव डाला गया जहां डेरे-खेमे का इन्तजाम पहिले ही से हो चुका था। पड़ाव पड़ जाने के थोड़ी ही देर बाद डेरों-खेमों से लदे हुए सैकड़ों ऊंट आगे की तरफ रवाना हुए जिनसे दूसरे दिन के पड़ाव का इन्तजाम होने वाला था। बाकी का दिन और तीन पहर रात तक वह जंगल गुलजार रहा और पहर रात रहते फिर वहां से लश्कर कूच हुआ।

इसी तरह कूच-दर-कूच करते वीरेन्द्रसिंह का लश्कर चुनारगढ़ की तरफ रवाना हुआ। तीन दिन तक तो मनोरमा का काम कुछ भी न हुआ पर चौथे दिन उसे अपना काम निकालने का मौका मिला जब किशोरी की एक लौंडी जिसका नाम दया था हाथ में लोटा लिए मैदान जाने की नीयत से पड़ाव के बाहर निकली। उस समय घड़ी भर रात जा चुकी थी और चारों तरफ अंधकार छाया हुआ था। दया रोहतासगढ़ के राजा दिग्विजयसिंह की लौंडियों में से थी और किशोरी उसे मानती थी क्योंकि उस जमाने में जब किशोरी कैदियों की तरह रोहतासगढ़ में रहती थी, दया ने उसकी खिदमत बड़ी हमदर्दी के साथ की थी।

दया को मैदान की तरफ जाते देख मनोरमा ने उसका पीछा किया। दबे पांव उसके साथ बराबर चली गई और जब जाना कि अब वह आगे बढ़ेगी तो एक पेड़ की आड़ देकर खड़ी हो गई। थोड़ी देर बाद जब दया जरूरी काम से छुट्टी पाकर लौटी तो मनोरमा बेधड़क उसके पास चली गई और फुर्ती के साथ तिलिस्मी खंजर उसके मोढ़े पर रख दिया। उसी दम दया कांपी और थरथराकर जमीन पर गिर पड़ी। मनोरमा ने उसे घसीटकर एक झाड़ी के अन्दर डाल दिया और निश्चय कर लिया कि जब राजा वीरेन्द्रसिंह का लश्कर यहां से कूच कर जायेगा और दिन निकल आवेगा तब सुभीते से दया की सूरत बनकर इसको जान से मार डालूंगी और फिर तेजी के साथ चलकर लश्कर में जा मिलूंगी, आखिर ऐसा ही हुआ।

थोड़ी रात रहे राजा वीरेन्द्रसिंह का लश्कर वहां से कूच कर गया और जब पहर दिन चढ़े अगले पड़ाव पर पहुंचा तो किशोरी ने दया की खोज की मगर दया का पता क्योंकर लग सकता था। बहुत - सी लौंडियां चारों तरफ फैल गईं और दया को ढूंढ़ने लगीं। दोपहर होने तक दया भी लश्कर में आ पहुंची जो वास्तव में मनोरमा थी। किशोरी ने पूछा, "दया, कहां रह गई थी तेरी खोज में सब लौंडियां अभी तक परेशान हो रही हैं।"

नकली दया ने जवाब दिया, "जिस समय लश्कर कूच हुआ तो मेरे पेट में कुछ गड़गड़ाहट मालूम हुई। थोड़ी दूर तक तो मैं जी कड़ा कर चली गई, आखिर जब गड़गड़ाहट ज्यादे हुई तो रास्ते में एक कुआं भी नजर आया तो लोटा-डोरी लेकर वहां ठहर गई। दो दफे तो टट्टी गई और तीन कै हुईं, कै में बहुत-सा खट्टा पानी निकला। मैंने समझा कि बस अब किसी तरह लश्कर के साथ नहीं मिल सकती और यहां पड़ी दुःख भोगूंगी मगर ईश्वर ने कुशल की कि, थोड़ी देर तक मैं उसी कुएं पर लेटी रही, आखिर मेरी तबियत ठहरी तो मैं धीरे-धीरे रवाना हुई और मुश्किल से यहां तक पहुंची। कै करने में मुझे तकलीफ हुई और मेरा गला भी बैठ गया।"

किशोरी ने दया की अवस्था पर दुःख प्रकट किया और उसे दया की बातों पर विश्वास हो गया। अब दया को किशोरी के साथ मेल-जोल पैदा करने में किसी तरह का खुटका न रहा और दो ही चार दिन में उसने किशोरी को अपने ऊपर बहुत ज्यादे मेहरबान बना लिया।

रोहतासगढ़ से चुनारगढ़ जाने के लिए यद्यपि भली-चंगी सड़क बनी हुई थी मगर राजा वीरेन्द्रसिंह का लश्कर सीधी सड़क छोड़ जंगल और मैदान ही में पड़ाव डालता

चला जा रहा था क्योंकि हजारों आदमियों को आराम जंगल और मैदान ही में मिलता था, सड़क के किनारे उतनी ज्यादे जगह नहीं मिल सकती थी।

एक दिन राजा वीरेन्द्रसिंह का लश्कर एक बहुत रमणीक और हरे-भरे जंगल में पड़ाव डाले हुए था, संध्या के समय राजा वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह टहलते हुए अपने खेमे से कुछ दूर निकल गये और एक छोटे-से टीले पर चढ़कर अस्त होते हुए सूर्य की शोभा देखने लगे। यकायक उनकी निगाह एक सवार पर पड़ी जो बड़ी तेजी के साथ घोड़ा दौड़ाता हुआ वीरेन्द्रसिंह के लश्कर की तरफ आ रहा था। दोनों की निगाहें उसी की तरफ उठ गईं और उसे बड़े गौर से देखने लगे। थोड़ी ही देर में वह सवार टीले के पास पहुंच गया और उस समय उस सवार की भी निगाह राजा वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह पर पड़ी। सवार ने तुरंत घोड़े का मुंह फेर दिया और बात की बात में राजा वीरेन्द्रसिंह के पास पहुंचकर घोड़े से नीचे उतर पड़ा। जिस टीले पर वह दोनों खड़े थे वह बहुत ऊंचा न था अतएव उस सवार ने नेजा गाड़कर घोड़े की लगाम उसमें अटका दी और बेखौफ टीले के ऊपर चढ़ गया। इस सवार के हाथ में एक चीठी थी जो उसने सलाम करने के बाद राजा वीरेन्द्रसिंह की दे दी। राजा साहब ने चीठी खोलकर बड़े गौर से पढ़ी और तेजसिंह के हाथ में दे दी। तेजसिंह ने भी उसे पढ़ा और राजा साहब की तरफ देखकर कहा, "निःसन्देह ऐसा ही है।"

वीरेन्द्र - तुमने तो इस विषय में मुझसे कुछ भी नहीं कहा था।

तेज - कुछ कहने की आवश्यकता न थी और अभी मैं इन बातों का निश्चय ही कर रहा था।

वीरेन्द्र - इस राय को तो मैं पसन्द करता हूं।

तेजसिंह - राय पसन्द करने योग्य है और इसका जवाब भी लिख देना चाहिए।

वीरेन्द्र - हां, इसका जवाब लिख दो।

"बहुत अच्छा" कहकर तेजसिंह ने अपनी जेब से जस्ते की एक कलम निकाली और उस चीठी की पीठ पर जवाब लिखकर वीरेन्द्रसिंह को दिखाया, राजा साहब ने उसे पसन्द किया और चीठी उसी सवार के हाथ में दे दी गई। सवार सलाम करके टीले से नीचे उतर आया और घोड़े पर सवार होकर उसी तरफ चला गया जिधर से आया था। सवार के चले जाने के बाद राजा वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह भी टीले से नीचे उतरे और

गुप्त विषय पर बातें करते हुए लश्कर की तरफ रवाना होकर थोड़ी ही देर में अपने खेमे के अन्दर जा पहुंचे।

इस सफर में राजा वीरेन्द्रसिंह का कायदा था कि दिन-रात में एक दफे किसी समय किशोरी और कामिनी के डेरे में जरूर जाते, थोड़ी देर बैठते और हर तरह की ऊंच-नीच समझा-बुझाकर तथा दिलासा देकर अपने डेरे में लौट आते। इसी तरह उन दोनों के पास दो दफे तेजसिंह के जाने का भी मामूल था। जिस समय किशोरी और कामिनी के पास राजा साहब या तेजसिंह जाते उस समय प्रायः सब लौंडियां अलग कर दी जातीं, केवल कमला उन दोनों के पास रह जाती थी। आज भी टीले पर से लौटने के बाद थोड़ी देर दम लेकर राजा वीरेन्द्रसिंह किशोरी और कामिनी के खेमे में गये और दो घड़ी तक वहां बैठे रहे, कुल लौंडियां हटा दी गई थीं केवल कमला मौजूद थी जो उन दोनों के दुःख-सुख की साथी बन चुकी थी और थी।

दो घड़ी तक वहां ठहरने के बाद राजा साहब अपने खेमे में लौट आये और तेजसिंह के पास बैठकर तरह-तरह की बातें करने लगे। जब रात ज्यादे चली गई तो राजा साहब ने चारपाई की शरण ली। तेजसिंह भी अपने खेमे में चले गये और खा-पीकर सो रहे।

तेजसिंह को चारपाई पर गये आधा घण्टा भी न बीता था कि चोबदार ने किशोरी की लौंडियों के आने की इत्तिला की। तेजसिंह तुरंत उठ बैठे और इन लौंडियों को अपने पास हाजिर करने की आज्ञा दी। थोड़ी ही देर में दो लौंडियां तेजसिंह के सामने आईं जिनमें से एक वही दया थी जिसे वास्तव में मनोरमा कहना चाहिए।

तेज - (लौंडियों से) इस समय तुम लोगों के आने से आश्चर्य मालूम होता है।

दया - निःसन्देह आश्चर्य होता होगा परन्तु क्या किया जाय, किशोरीजी की आज्ञा से हम लोगों को आना पड़ा।

तेज - क्या समाचार है

दया - किशोरीजी ने हम लोगों को आपके पास भेजा है और कहा है कि "यहां से थोड़ी दूर पर कोई ऐसी इमारत है जिसके अन्दर तिलिस्म होने का शक है। जब मैं कैदियों की तरह रोहतासगढ़ में रहती थी तो यह बात राजा दिग्विजयसिंह की जुबानी सुनने में आई थी। यदि यह बात ठीक है तो आपकी कृपा से मैं इस इमारत को देखा चाहती हूं!"

तेज - किशोरी का कहना ठीक है, निःसन्देह यहां से थोड़ी ही दूर पर एक इमारत है जिसमें तरह - तरह की अद्भुत बातें देखने में आती हैं और मैं उस इमारत को देख चुका हूं, मगर एक साथ कई आदमियों का उस इमारत के अंदर जाना बहुत कठिन है। (कुछ सोचकर) अच्छा तुम लोग चलो, मैं महाराज से वहां जाने की आज्ञा लेकर बहुत जल्द किशोरी के पास आता हूं।

दया - जो आज्ञा।

दोनों लौंडियां सलाम करके किशोरी के पास चली गईं और जो कुछ तेजसिंह ने उनसे कहा था वह किशोरी के सामने अर्ज किया, इस समय वहां किशोरी, कामिनी और कमला एक साथ बैठी हुई थीं और कई लौंडियां भी मौजूद थीं।

थोड़ी देर बाद तेजसिंह के आने की इत्तिला मिली और कमला उनको लेने के लिए खेमे के बाहर गई। जब तेजसिंह खेमे के अंदर आए तो उन्हें देख किशोरी और कामिनी उठ खड़ी हुईं और जब तेजसिंह बैठ गये तो अदब के साथ उनके सामने बैठ गईं।

तेज - (किशोरी से) उस इमारत की याद यकायक कैसे आ गई?

किशोरी - अकस्मात् उस इमारत की याद आ गई। कामिनी बहिन को भी उसे देखने का बहुत शौक है। मैंने सोचा कि ऐसा मौका फिर काहे को मिलेगा। वह इमारत रास्ते ही में पड़ती है, यदि आपकी कृपा होगी तो हम लोग उसे देख लेंगी।

तेज - बात तो ठीक है और वह इमारत भी देखने योग्य है, मैं तुम्हें वहां ले जा सकता हूं और महाराज से आज्ञा भी ले आया हूं मगर तुम अपने साथ किसी लौंडी को वहां न ले जा सकोगी।

किशोरी - कामिनी बहिन और कमला का चलना तो आवश्यक है और ये दोनों न जायंगी तो मुझे उसके देखने का आनन्द ही क्या मिलेगा

तेज - इन दोनों के लिए मैं मना नहीं करता, मैं रथ जोतने के लिए हुक्म दे आया हूं, अभी आता होगा। तुम तीनों उस रथ पर सवार हो जाओ, घोड़े की रास मैं लूंगा और तुम लोगों को वहां ले चलूंगा, सिवाय हम चार आदमियों के और कोई भी न जायगा।

किशोरी - जब स्वयं आप हम लोगों के साथ हैं तो हमें और किसी की जरूरत क्या है?

तेज - यदि इस समय हम लोग रथ पर सवार होकर रवाना होंगे तो घण्टे-भर के अन्दर ही वहां जा पहुंचेंगे, छः-सात घण्टे में उस इमारत को अच्छी तरह से देख लेंगे, इसके बाद यहां लौटने की कोई जरूरत नहीं है, अगले पड़ाव की तरफ चले जाएंगे। जब तक हमारा लश्कर यहां से कूच करके अगले पड़ाव पर पहुंचेगा तब तक हम लोग भी वहां पहुंच जाएंगे।

किशोरी - जैसी मर्जी।

थोड़ी ही देर बाद इत्तिला मिली कि दो घोड़ों का रथ हाजिर है। तेजसिंह उठ खड़े हुए, पर्दे का इन्तजाम किया गया, किशोरी, कामिनी और कमला उस पर सवार कराई गईं, तेजसिंह ने घोड़ों की रास सम्भाली और रथ तेजी के साथ वहां से रवाना हुआ।

बयान - 6

रात बीत गई, पहर भर दिन चढ़ने के बाद राजा वीरेन्द्रसिंह का लश्कर अगले पड़ाव पर जा पहुंचा और उसके घण्टे भर बाद तेजसिंह भी रथ लिये हुए आ पहुंचे। रथ जनाने डेरे के आगे लगाया गया, पर्दा करके जनानी सवारी (किशोरी, कामिनी और कमला) उतारी गईं और रथ नौकरों के हवाले करके तेजसिंह राजा साहब के पास चले गये।

आज के पड़ाव पर हमारे बहुत दिनों के बिछुड़े हुए ऐयार लोग अर्थात् पन्नालाल, रामनारायण, चुन्नीलाल और पण्डिल बद्रीनाथ भी आ मिले क्योंकि इन लोगों को राजा साहब के चुनारगढ़ जाने की इत्तिला पहिले ही से दे दी गई थी। ये लोग उसी समय उस खेमे में चले गये जहां कि राजा वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह एकान्त में बैठे बातें कर रहे थे। इन चारों ऐयारों को आशा थी कि राजा वीरेन्द्रसिंह के साथ ही साथ चुनारगढ़ जायेंगे मगर ऐसा न हुआ, इसी समय कई काम उन लोगों के सुपुर्द हुए और राजा साहब की आज्ञानुसार वे चारों ऐयार वहां से रवाना होकर पूरब की तरफ चले गये।

राजा वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह को इस बात की आहट लग गई थी कि मनोरमा भेष बदले हुए हमारे लश्कर के साथ चल रही है और धीरे-धीरे उसके मददगार लोग भी रूप बदले हुए लश्कर में चले आ रहे हैं मगर तेजसिंह को उसे गिरफ्तार करने का मौका नहीं मिलता था। उन्हें इस बात का पूरा-पूरा विश्वास था कि मनोरमा निःसन्देह किसी लौंडी की सूरत में होगी मगर बहुत-सी लौंडियों में से मनोरमा को जो बड़ी धूर्त और ऐयार थी छांटकर निकाल लेना कठिन काम था। मनोरमा के न

पकड़े जाने का एक सबब और भी था, तेजसिंह इस बात को तो सुन ही चुके थे कि मनोरमा ने बेवकूफ नानक से तिलिस्मी खंजर ले लिया है, अस्तु तेजसिंह का खयाल यही था कि मनोरमा तिलिस्मी खंजर अपने पास अवश्य रखती होगी। यद्यपि राजा साहब की बहुत-सी लौंडियां खंजर रखती थीं मगर तिलिस्मी खंजर रखने वालों को पहिचान लेना तेजसिंह मामूली काम समझते थे और उनकी निगाह इसलिए बार-बार तमाम लौंडियों की उंगलियों पर पड़ती थी। तिलिस्मी खंजर के जोड़ की अंगूठी किसी न किसी की उंगली में जरूर दिखाई दे जायगी और जिसकी उंगली में वैसी अंगूठी दिखाई देगी उसे ही मनोरमा समझकर तुरंत गिरफ्तार कर लेंगे।

यह सब-कुछ था मगर मनोरमा भी कुछ कम चांगली न थी और उसकी होशियारी और चालाकी ने तेजसिंह को पूरा धोखा दिया। इस बात का मनोरमा भी पहले ही से विचार कर चुकी थी कि मेरे हाथ में तिलिस्मी खंजर के जोड़ की अंगूठी अगर तेजसिंह देखेंगे तो मेरा भेद खुल जायगा, अतएव उसने बड़ी मुस्तैदी और हिम्मत का काम किया अर्थात् इस लश्कर में आ मिलने के पहिले ही उसने इस बात को आजमाया कि तिलिस्मी खंजर के जोड़ की अंगूठी केवल उंगली ही में पहिरने से काम देती है या बदन के किसी भी हिस्से के साथ लगे रहने से उसका फायदा पहुंचता है। परीक्षा करने पर जब उसे मालूम हुआ कि वह तिलिस्मी अंगूठी केवल उंगली ही में पहिरने के लिए नहीं है बल्कि बदन के किसी भी हिस्से के साथ लगे रहने से ही अपना काम कर सकती है, तब उसने अपनी जंघा चीर के तिलिस्मी खंजर के जोड़ की अंगूठी उसमें भर दी और ऊपर से सी कर तथा मरहम-पट्टी लगाकर आराम कर लिया। इसी सबब से आज तिलिस्मी खंजर रहने पर भी तेजसिंह उसे पहिचान नहीं सके, मगर तेजसिंह का दिल इस बात को भी कबूल नहीं कर सकता था कि मनोरमा इस लश्कर में नहीं है, बल्कि मनोरमा के मौजूद होने का विश्वास उन्हें उतना ही था जितना पढ़े-लिखे आदमी को एक और एक दो होने का विश्वास होता है।

आज तेजसिंह ने यह हुक्म जारी किया कि किशोरी, कामिनी और कमला के खेमे में[1] उस समय कोई लौंडी न रहे और न जाने पावे जब वे तीनों निद्रा की अवस्था में हों अर्थात् जब वे तीनों जागती रहें तब तक तो लौंडियां उनके पास रहें और आ-जा सकें परन्तु जब वे तीनों सोने की इच्छा करें तब एक भी लौंडी खेमे में न रहने पावे और जब तक कमला घण्टी बजाकर किसी लौंडी को बुलाने का इशारा न करे तब तक कोई लौंडी खेमे के अन्दर न जाय और उस खेमे के चारों तरफ बड़ी मुस्तैदी के साथ पहरा देने का इन्तजाम रहे।

इस आज्ञा को सुनकर मनोरमा बहुत ही चिटकी और मन में कहने लगी कि 'तेजसिंह भी बड़ा बेवकूफ आदमी है, भला ये सब बात मनोरमा के हौसले को कभी कम कर सकती है बल्कि मनोरमा अपने काम में अब और शीघ्रता करेगी! क्या मनोरमा केवल इसी काम के लिए इस लश्कर में आई है कि किशोरी को मारकर चली जाय नहीं-नहीं, वह इससे भी बढ़कर करने के लिए आई है। अच्छा-अच्छा, तेजसिंह को इस चालाकी का मजा आज ही न चखाया तो कोई बात नहीं! किशोरी, कामिनी और कमला को या इन तीनों में से किसी एक को आज ही न मार खपाया तो मनारेमा नाम नहीं। रह तो जा नालायक, देखें तेरी होशियारी कहां तक काम करती है'! ऐसी-ऐसी बहुत-सी बातें मनोरमा ने सोचीं और अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने का उद्योग करने लगी।

1. किशोरी, कामिनी और कमला एक खेमे में रहा करती थीं।

बयान - 7

रात आधी से ज्यादा जा चुकी है। उस लम्बे-चौड़े खेमे के चारों तरफ बड़ी मुस्तैदी के साथ पहरा लग रहा है जिसमें किशोरी, कामिनी और कमला गहरी नींद में सोई हुई हैं। उसके दोनों बगल और भी दो बड़े-बड़े डेरे हैं जिनमें लौंडियां हैं और उन दोनों डेरों के चारों तरफ भी दो फौजी सिपाही घूम रहे हैं। मनोरमा चुपचाप अपने बिछावन पर से उठी, कनात उठाकर चोरों की तरह खेमे के नीचे से बाहर निकल गई, और पैर दबाती हुई किशोरी के खेमे की तरफ चली। दूर से उसने देखा कि चार फौजी सिपाही हाथ में नंगी तलवारें लिए हुये घूम-घूमकर पहरा दे रहे हैं। वह हाथ में तिलिस्मी खंजर लिये हुए खेमे के पीछे चली गई। जब पहरा देने वाले टहलते हुए कुछ आगे निकल गए तब उसने कदम बढ़ाया और तिलिस्मी खंजर म्यान से निकाल कर उनके रास्ते में रख दिया, इसके बाद पीछे हटकर पुनः आड़ में खड़ी हो गई तथा पहरा देने वालों की तरफ ध्यान देकर देखने लगी। जब पहरा देने वाले लौटकर उस खंजर के पास पहुंचे तो एक की निगाह उस खंजर पर जा पड़ी जिसका लोहा तारों की रोशनी में चमक रहा था। उसने झुककर खंजर उठाना चाहा मगर छूने के साथ ही बेहोश होकर औंधे मुंह जमीन पर गिर पड़ा। उसकी यह अवस्था देखकर उसके साथियों को भी आश्चर्य हुआ। दूसरे ने झुककर उसे उठाना चाहा और जब खंजर पर उसका हाथ पड़ा तो उसकी भी वही दशा हुई जो पहिले सिपाही की हुई थी। तिलिस्मी खंजर का हाल और गुण गिने हुए आदमियों को मालूम था और जिन्हें मालूम था वे उसे बहुत छिपाकर रखते थे। बेचारे फौजी सिपाहियों को इस बात की कुछ खबर न थी और धोखे में पड़कर जैसा कि ऊपर लिख चुके हैं एक-दूसरे के बाद चारों सिपाही

खंजर छू-छूकर बेहोश हो गए। उस समय मनोरमा पेड़ की आड़ से बाहर निकलकर चारों बेहोश सिपाहियों के पास पहुंची, अपना खंजर उठा लिया और उसी खंजर से खेमे के पीछे कनात में बड़ा-सा छेद करने के बाद बड़ी होशियारी से खेमे के अन्दर घुस गई। उस समय किशोरी, कामिनी और कमला गहरी नींद में खुर्राटे ले रही थीं जिन्हें एकदम दुनिया से उठा देने की फिक्र में मनोरमा लगी हुई थी। मनोरमा उनके सिरहाने की तरफ खड़ी हो गई और सोचने लगी, निःसन्देह इस समय मेरा वार खाली नहीं जा सकता, तिलिस्मी खंजर के एक ही वार में सिर कटकर अलग हो जायगा, मगर एक के सिर कटने की आहट पाकर बाकी की दोनों जग जायेंगी, ऐसा न होना चाहिए। इस समय इन तीनों ही को मारना मेरा काम है, अच्छा पहिले इस तिलिस्मी खंजर से इन तीनों को बेहोश कर देना चाहिए। इतना सोच मनोरमा ने तिलिस्मी खंजर बदन में लगाकर उन तीनों को बेहोश कर दिया और फिर सिर काटने के लिए तैयार हो गई। उसने तिलिस्मी खंजर का एक भरपूर हाथ किशोरी की गर्दन पर जमाया और जिससे सिर कटकर अलग हो गया, दूसरा हाथ उसने कामिनी की गर्दन पर जमाया और उसका सिर काटने के बाद कमला का सिर भी धड़ से अलग कर दिया। इसके बाद खुशी भरी निगाहों से तीनों लाशों की तरफ देखने लगी और बोली, "इन्हीं तीनों ने दुनिया में ऊधम मचा रक्खा था। जिस तरह इस समय इन तीनों को मारकर मैं खुश हो रही हूं उसी तरह बहुत जल्द वीरेन्द्रसिंह, इन्द्रजीत, आनन्द, और गोपाल को भी मारकर खुशी-भरी निगाहों से उनकी लाशों को देखूंगी। तब दुनिया में मायारानी और मनोरमा के सिवाय कोई भी प्रतापी दिखाई न देगा!" मनोरमा इतना कह ही चुकी थी कि पीछे की तरफ से आवाज आई - "नहीं-नहीं, ऐसा न हुआ है और न कभी होगा!'

बयान - 8

अब हम थोड़ा-सा हाल इन्द्रदेव का बयान करते हैं जो लक्ष्मीदेवी, कमलिनी, लाडिली और नकली बलभद्रसिंह को साथ लेकर अपने घर की तरफ रवाना हुए थे और उनके साथ कुछ दूर तक भूतनाथ भी गया था।

नकली बलभद्रसिंह हथकड़ी-बेड़ी से जकड़ा हुआ एक डोली पर सवार कराया गया था और कुछ फौजी सिपाही उसे चारों तरफ से घेरे हुए जा रहे थे। लक्ष्मीदेवी, कमलिनी तथा लाडिली पालकियों पर सवार कराई गई थीं और उन तीनों पालकियों के आगे-पीछे बहुत-से सिपाही जा रहे थे। इन्द्रदेव एक उम्दा घोड़े पर सवार थे और भूतनाथ पैदल उनके साथ-साथ जा रहा था। दोपहर दिन चढ़े बाद जब इन लोगों का डेरा एक सुहावने जंगल में पड़ा तो भूतनाथ ने इन्द्रदेव से विदा मांगी। इन्द्रदेव ने

कहा, "मुझे तो कोई उज्र नहीं है मगर लक्ष्मीदेवी और कमलिनी से पूछ लेना जरूरी है। तुम मेरे साथ उनके पास चलो, मैं उन लोगों से तुम्हें छुट्टी दिला देता हूं।"

लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली की पालकी एक घने पेड़ के नीचे आमने-सामने रक्खी हुई थीं और उनके चारों तरफ कनात घिरी हुई थी। बीच में उम्दा फर्श बिछा हुआ था और तीनों बहिनें उस पर बैठी बातें कर रही थीं। इन्द्रदेव अपने साथ भूतनाथ को लिये हुए उन तीनों के पास गये और कमलिनी की तरफ देखकर बोले, "भूतनाथ बिदा होने की आज्ञा मांगता है।"

इन्द्रदेव को देखकर तीनों बहिनें उठ खड़ी हुईं और कमलिनी ने भूतनाथ को भी अपने सामने फर्श पर बैठने का इशारा किया। भूतनाथ बैठ गया तो बातें होने लगीं -

कमलिनी - (भूतनाथ से) भूतनाथ, तुम्हारे मामले ने तो हम लोगों को बहुत परेशान कर रक्खा है। पहिले तो यही विश्वास हो गया था कि तुम ही मेरे पिता के घातक हो और यह जैपालसिंह वास्तव में हमारा पिता है, वह खयाल तो अब जाता रहा मगर तुम अभी तक बेकसूर साबित न हुए।

भूत - कसूरवार तो मैं जरूर हूं, पहिले ही तुमसे कह चुका हूं कि, 'मेरे हाथ से कई बुरे काम हो चुके हैं जिनके लिए मैं पछता रहा हूं और अब नेक काम करके दुनिया में नेकनाम हुआ चाहता हूं' और तुमने मेरी सहायता करने की प्रतिज्ञा भी की थी। तब से तुम स्वयं देख रही हो कि मैं कैसे-कैसे काम कर रहा हूं। यह सब-कुछ है, मगर मैंने तुम्हारे पिता-माता या तुम तीनों बहिनों के साथ कभी कोई बुराई नहीं की इसे तुम निश्चय समझो, शायद यही सबब है कि ऐसे नाजुक समय में भी कृष्णा जिन्न ने मेरी सहायता की, मालूम होता है कि वह मेरा हाल अच्छी तरह जानता है।

कमलिनी - खैर यह तो जब तुम्हारा मुकद्दमा होगा तब मालूम हो जायगा क्योंकि मैं बिल्कुल नहीं जानती कि कृष्णा जिन्न कौन है, उसने तुम्हारा पक्ष क्यों लिया, और राजा वीरेन्द्रसिंह ने क्यों कृष्णा जिन्न की बात मानकर तुम्हें कैद से छुट्टी दे दी।

लक्ष्मीदेवी - (भूतनाथ से) मगर मैं जहां तक समझती हूं यही जान पड़ता है कि तुम कृष्णा जिन्न को अच्छी तरह पहिचानते हो।

भूत - नहीं-नहीं, कदापि नहीं। (खंजर हाथ में लेकर) मैं कसम खाकर कहता हूं कि कृष्णा जिन्न को बिल्कुल नहीं पहिचानता मगर उसकी कुदरत देखकर जरूर

आश्चर्य करता हूं और उससे डरता हूं। यद्यपि उसने मुझे कैद से छुड़ा दिया मगर तुम देखती हो कि भागकर जान बचाने की नीयत मेरी नहीं है। कई दफे स्वतन्त्र हो जाने पर भी मैंने तुम्हारे काम से मुंह नहीं फेरा और समय पड़ने पर जान तक देने को तैयार हो गया।

कमलिनी - ठीक है-ठीक है, और अबकी दफे रोहतासगढ़ में पहुंचकर भी तुमने बड़ा काम किया, मगर इस बारे में मुझे एक बात का आश्चर्य मालूम होता है।

भूतनाथ - वह क्या?

कमलिनी - तुमने अपना हाल बयान करते समय कहा था कि, "मैंने तिलिस्मी खंजर से शेरअलीखां की सहायता की थी।"

भूतनाथ - हां बेशक कहा था।

कमलिनी - तुम्हें जो तिलिस्मी खंजर मैंने दिया था वह तो मायारानी ने उस समय अपने कब्जे में कर लिया था जब जमानिया तिलिस्म के अन्दर जाने वाली सुरंग में उसने तुम लोगों को बेहोश किया था। उसने राजा गोपालसिंह का भी तिलिस्मी खंजर लेकर नागर को दे दिया था। नागर वाला तिलिस्मी खंजर तो भैरोसिंह ने (इन्द्रदेव की तरफ इशारा कर) आपसे ले लिया था जो मेरी इच्छानुसार अब तक भैरोसिंह के पास है परन्तु तुम्हारे पास तिलिस्मी खंजर कहां से आ गया जिससे तुमने काम लिया और जो अब तक तुम्हारे पास है?

भूतनाथ - आपको मालूम हुआ होगा कि मेरा खंजर जो मायारानी ने ले लिया था उसे कृष्णजिन्न ने रोहतासगढ़ किले के अन्दर उस समय मायारानी से छीन लिया था जब वह शेरअलीखां को लेकर वहां गई थी।

कमलिनी - हां ठीक है, तो क्या वही खंजर कृष्णा जिन्न ने फिर तुम्हें दे दिया?

भूतनाथ - जी हां, (तिलिस्मी खंजर और उसके जोड़ की अंगूठी कमलिनी के आगे रखकर) अब यदि मर्जी हो तो ले लीजिये यह हाजिर है।

कम - (कुछ सोचकर) नहीं, अब यह खंजर तुम अपने ही पास रक्खो, जब कृष्णा जिन्न ने जिन्हें राजा वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह मानते हैं तुम्हें दे दिया तो अब बिना उनकी इच्छा के छीन लेना मैं उचित नहीं समझती, (ऊंची सांस लेकर) क्या कहा जाय, तुम्हारे मामले में अक्ल कुछ भी काम नहीं करती।

इन्द्रदेव - भूतनाथ, तुम देखते हो कि नकली बलभद्रसिंह को मैं अपने साथ लिये जाता हूं, अगर तुम भी मेरे साथ चलके उससे बातचीत करते तो...।

भूत - नहीं-नहीं, आप मुझे अपने साथ ले चलकर उसका मुकाबला न कराइये, उसका सामना होने से ही मेरी जान सूख जाती है! यह तो मैं जानता ही हूं कि एक न एक दिन मेरा और उसका सामना धूमधाम के साथ होगा और जो कुछ कसूर मैंने किया है या उसका बिगाड़ा है खुले बिना न रहेगा परन्तु अभी आप क्षमा करें। थोड़े दिनों में मैं अपने बचाव का सामान इकट्ठा कर लूंगा और तब तक बलभद्रसिंह का भी पता लग जायेगा, उनसे भी सहायता मिलने की मुझे आशा है, हां, यदि आप मेरी प्रार्थना स्वीकार न करें तो लाचार मैं साथ चलने के लिए हाजिर हूं।

इन्द्रदेव - (कुछ सोचकर) खैर कोई चिन्ता नहीं, तुम जाओ, बलभद्रसिंह को खोज निकालने का उद्योग करो और इन्दिरा का भी पता लगाओ। अब मुझसे कब मिलोगे?

भूत - आठ-दस दिन के बाद आपसे मिलूंगा, फिर जैसा मौका हो।

कमलिनी - अच्छा जाओ, मगर जो कुछ करना है उसे दिल लगाकर करो।

भूत - मैं कसम खाकर कहता हूं कि बलभद्रसिंह को खोज निकालने की फिक्र सबसे ज्यादे दुनिया में जिस आदमी को है, वह मैं हूं।

इतना कहकर भूतनाथ उठ खड़ा हुआ और अपने अड्डे की तरफ रवाना हो गया। तीसरे दिन अपने अड्डे पर पहुंचा जो 'बराबर' की पहाड़ी पर था। वहां उसने अपने आदमी दाऊ बाबा की जुबानी नानक का हाल सुना और क्रोध में भरा हुआ केवल दो घण्टे वहां रहने के बाद पहाड़ी के नीचे उतरकर उस जंगल की तरफ रवाना हो गया जहां पहिले पहल श्यामसुन्दरसिंह और भगवनिया के सामने नकली बलभद्रसिंह से उसकी मुलाकात हुई थी।

बयान - 9

लक्ष्मीदेवी, कमलिनी, लाडिली और नकली बलभद्रसिंह को लिये हुए इन्द्रदेव अपने गुप्त स्थान पर पहुंच गये। दोपहर का समय है। एक सजे हुए कमरे के अन्दर ऊंची गद्दी के ऊपर इन्द्रदेव बैठे हुए हैं, पास ही में एक दूसरी गद्दी बिछी हुई है जिस पर लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली बैठी हुई हैं, उनके सामने हथकड़ी-बेड़ी और

रस्सियों से जकड़ा हुआ नकली बलभद्रसिंह बैठा है, और उसके पीछे हाथ में नंगी तलवार लिए इन्द्रदेव का ऐयार सर्यूसिंह खड़ा है।

नकली बलभद्र - (इन्द्रदेव से) जिस समय मुझसे और भूतनाथ से मुलाकात हुई थी उस समय भूतनाथ की क्या दशा हुई सो स्वयं तेजसिंह देख चुके हैं। अगर भूतनाथ सच्चा होता तो मुझसे क्यों डरता। मगर बड़े अफसोस की बात है कि राजा वीरेन्द्रसिंह ने कृष्णा जिन्न के कहने से भूतनाथ को छोड़ दिया और जिस सन्दूकड़ी को मैंने पेश किया था उसे न खोला, वह खुलती तो भूतनाथ का बाकी भेद छिपा न रहता।

इन्द्रदेव - जो हो, मैं राजा साहब की बातों में दखल नहीं दे सकता, मगर इतना कह सकता हूं कि भूतनाथ ने चाहे तुम्हारे साथ हद से ज्यादे बुराई की हो मगर लक्ष्मीदेवी के साथ कोई बुराई नहीं की थी, इसके अतिरिक्त छोड़ दिये जाने पर भी भूतनाथ भागने का उद्योग नहीं करता और समय पड़ने पर हम लोगों का साथ देता है।

नकली बलभद्र - अगर भूतनाथ आप लोगों का काम न करे तो आप लोग उस पर दया न करेंगे यही समझकर वह...।

इन्द्रदेव - (चिढ़कर) ये सब वाहियात बातें हैं, मैं तुमसे बकवास करना पसन्द नहीं करता, तुम यह बताओ कि तुम जैपाल हो या नहीं।

नकली बलभद्र - मैं वास्तव में बलभद्रसिंह हूं।

इन्द्र - (क्रोध के साथ) अब भी तू झूठ बोलने से बाज नहीं आता, मालूम होता है कि तेरी मौत आ चुकी है, अच्छा देख मैं तुझे किस दुर्दशा के साथ मारता हूं! (सर्यूसिंह से) तुम पहिले इसकी दाहिनी आंख उंगली डालकर निकाल लो।

नकली बलभद्र - (लक्ष्मीदेवी से) देखो तुम्हारे बाप की क्या दुर्दशा हो रही है!

लक्ष्मी - मुझे अब अच्छी तरह से निश्चय हो गया कि तू हमारा बाप नहीं है। आज जब मैं पुरानी बातों को याद करती हूं तो तेरी और दारोगा की बेईमानी साफ मालूम हो जाती है। सबसे पहिले जिस दिन तू कैदखाने में मुझसे मिला था उसी दिन मुझे तुम पर शक था मगर तेरी इस बात पर कि 'जहरीली दवा के कारण मेरा बदन खराब हो गया है' मैं धोखे में आ गई थी।

नकली बलभद्र - और यह मोढ़े पर वाला निशान?

लक्ष्मी - यह भी बनावटी है, अच्छा अगर तू मेरा बाप है तो मेरी एक बात का जवाब दे।

नकली बलभद्र - पूछो।

लक्ष्मी - जिन दिनों मेरी शादी होने वाली थी और जमानिया जाने के लिए मैं पालकी पर सवार होने लगी थी तब मेरी क्या दुर्दशा हुई थी और मैं किस ढंग से पालकी पर बैठाई गई थी

नकली बलभद्र - (कुछ सोचकर) अब इतनी पुरानी बात तो मुझे याद नहीं है मगर मैं सच कहता हूं कि मैं ही बलभद्र...।

इन्द्रदेव - (क्रोध से सर्यूसिंह से) बस अब विलम्ब करने की आवश्यकता नहीं।

इतना सुनते ही सर्यूसिंह ने धक्का देकर नकली बलभद्रसिंह को गिरा दिया और औजार डालकर उसकी दाहिनी आंख निकाल ली। नकली बलभद्रसिंह जिसे अब हम जैपाल के ही नाम से लिखेंगे दर्द से तड़पने लगा और बोला, "अफसोस मेरे हाथ-पैर बंधे हुए हैं, अगर खुले होते तो मैं इस बेदर्दी का मजा चखा देता!"

इन्द्रदेव - अभी अफसोस क्या करता है, थोड़ी देर में तेरी दूसरी आंख भी निकाली जायेगी और उसके बाद तेरा एक-एक अंग काटकर अलग किया जायगा! (सर्यूसिंह से) हां सर्यूसिंह, अब इसकी दूसरी आंख भी निकाल लो और इसके बाद दोनों पैर काट डालो।

जैपाल - (चिल्लाकर) नहीं-नहीं, जरा ठहरो, मैं तुम्हें बलभद्रसिंह का सच्चा हाल बताता हूं।

इन्द्रदेव - अच्छा बताओ।

जैपाल - पहिले मेरी आंख में कोई दवा लगाओ जिसमें दर्द कम हो जाय। तब मैं तुमसे सब हाल कहूंगा।

इन्द्रदेव - ऐसा नहीं हो सकता, बताना हो तो जल्द बता नहीं तो तेरी दूसरी आंख भी निकाल ली जायगी।

जैपाल - अच्छा मैं अभी बताता हूं। दारोगा ने उसे अपने बंगले में कैद कर रक्खा था, मगर अफसोस, मायारानी ने उस बंगले को बारूद के जोर से उड़ा दिया, उम्मीद है कि उसी में उस बेचारे की हड्डी-पसली भी उड़ गई होगी।

इन्द्रदेव - (सर्यूसिंह से) सर्यूसिंह, यह हरामजादा अपनी बदमाशी से बाज न आवेगा, अस्तु तुम एक काम करो, इसकी जो आंख तुमने निकाली है उसके गड़हे में पिसी हुई लाल मिर्च भर दो।

इतना सुनते ही जैपाल चिल्ला उठा और हाथ जोड़कर बोला -

जैपाल - माफ करो, माफ करो, अब मैं झूठ न बोलूंगा, मुझे जरा दम ले लेने दो, जो कुछ हाल है मैं सच-सच कह दूंगा, इस तरह तड़प-तड़पकर जान देना मुझे मंजूर नहीं। मुझे क्या पड़ी है जो दारोगा का पक्ष करके इस तरह अपनी जान दूं, कभी नहीं, अब मैं तुमसे झूठ नहीं बोलूंगा।

इन्द्रदेव - अच्छ-अच्छा, दम ले-ले, कोई चिन्ता नहीं, जब तू बलभद्रसिंह का हाल बताने को तैयार ही है तो मैं तुझे क्यों सताने लगा।

जैपाल - (कुछ ठहरकर) इसमें कोई शक नहीं कि बलभद्रसिंह अभी तक जीता है और इन्दिरा तथा इन्दिरा की मां के विषय में भी आशा करता हूं कि जीती होंगी।

इन्द्रदेव - बलभद्रसिंह के जीते रहने का तो तुझे निश्चय है मगर इन्दिरा और उसकी मां के बारे में 'आशा है' से क्या मतलब है?

जैपाल - इन्दिरा और इन्दिरा की मां को दारोगा ने तिलिस्म में बन्द करना चाहा था, उस समय न मालूम किस ढंग से इन्दिरा तो छूटकर निकल गई मगर उसकी मां जमानिया तिलिस्म के चौथे दर्जे में कैद कर दी गई, इसी से उसके बारे में निश्चय रूप से नहीं कह सकता, मगर बलभद्रसिंह अभी तक जमानिया में उस मकान के अन्दर कैद है जिसमें दारोगा रहता था। यदि आप मुझे छुट्टी दें या मेरे साथ चलें तो मैं उसे बाहर निकाल दूं या आप खुद जाकर जिस ढंग से चाहें, उसे छुड़ा लें।

इन्द्रदेव - मुझे तेरी यह बात भी सच नहीं जान पड़ती।

जैपाल - नहीं-नहीं, अबकी दफे मैंने सच ही सच बता दिया है।

इन्द्रदेव - यदि मैं वहां जाऊं और बलभद्रसिंह न मिले तो!

जैपाल - मिलने न मिलने से मुझे कोई मतलब नहीं, क्योंकि उस मकान में से ढूंढ़ निकालना आपका काम है, अगर आप ही पता लगाने में कसर कर जायेंगे तो मेरा क्या कसूर! हां एक बात और है, इधर थोड़े दिन के अन्दर दारोगा ने किसी दूसरी जगह उन्हें रख दिया हो तो मैं नहीं जानता मगर दारोगा का रोजनामचा यदि आपको मिल जाये और उसे पढ़ सकें तो बलभद्रसिंह के छूटने में कुछ कसर न रहे।

इन्द्रदेव - क्या दारोगा रोजनामचा बराबर लिखा करता था?

जैपाल - जी हां, वह अपना रत्ती-रत्ती हाल रोजनामचे में लिखा करता था।

इन्द्रदेव - वह रोजनामचा क्योंकर मिलेगा?

जैपाल - जमानिया के पक्के घाट के ऊपर ही एक तेली रहता है, उसका मकान बहुत बड़ा है और दारोगा की बदौलत वह भी अमीर हो गया है। उसका नाम भी जैपाल है और उसी के पास दारोगा का रोजनामचा है, यदि आप उससे ले सकें तो अच्छी बात है नहीं तो कहिये मैं उसके नाम की एक चीठी लिख दूंगा।

इन्द्रदेव - (कुछ सोचकर) बेशक तुझे उसके नाम की एक चीठी लिख देनी होगी, मगर इतना याद रखियो के यदि तेरी बात झूठ निकली तो मैं बड़ी दुर्दशा के साथ तेरी जान लूंगा!

जैपाल - और अगर सच निकली तो क्या मैं छोड़ दिया जाऊंगा?

इन्द्रदेव - (मुस्कुराकर) हां अगर तेरी मदद से बलभद्रसिंह को हम पा जायेंगे तो तेरी जान छोड़ दी जाएगी मगर तेरे दोनों पैर काट डाले जायेंगे और तेरी दूसरी आंख भी बेकाम कर दी जायेगी।

जैपाल - सो क्यों?

इन्द्रदेव - इसलिए कि तू फिर किसी काम लायक न रहे और न किसी के साथ बुराई कर सके।

जैपाल - फिर मुझे खाने को कौन देगा?

इन्द्रदेव - मैं दूंगा।

जैपाल - खैर जैसी मर्जी आपकी। मुझे स्वीकार है, मगर इस समय तो मेरी आंख में कोई दवा डालिये नहीं तो मैं मर जाऊंगा।

इन्द्रदेव - हां-हां, तेरी आंख का इलाज भी किया जायगा, मगर पहिले तू उस तेली के नाम की चीठी लिख दे।

जैपाल - अच्छा मैं लिख देता हूं, हाथ खोलकर कलम-दवात, कागज मेरे आगे रक्खो।

यद्यपि आंख की तकलीफ बहुत ज्यादे थी मगर जैपाल भी बड़े ही कड़े दिल का आदमी था। उसका एक हाथ खोल दिया गया, कलम-दवात-कागज उसके सामने रक्खा गया, और उसने जैपाल तेली के नाम एक चीठी लिखकर उसकी निशानी कर दी। चीठी में यह लिखा हुआ था -

"मेरे प्यारे जैपाल चक्री,

दारोगा बाबा वाला रोजनामचा इन्हें दे देना, नहीं तो मेरी और दारोगा की जान न बचेगी। हम दोनों आदमी इन्हीं के कब्जे में हैं।"

इन्द्रदेव ने वह चीठी लेकर अपने जेब में रक्खी और सर्यूसिंह को जैपाल को दूसरी कोठरी में ले जाकर कैद करने का हुक्म दिया तथा जैपाल की आंख में दवा लगाने के लिए भी कहा। धूर्तराज जैपाल ने निःसन्देह इन्द्रदेव को धोखा दिया, उसने जो तेली के नाम चीठी लिखकर दी उसके पढ़ने से दोनों मतलब निकलते हैं। "हम दोनों आदमी इन्हीं के कब्जे में हैं" ये ही शब्द इन्द्रदेव को फंसाने के लिए काफी थे, अस्तु देखा चाहिए वहां जाने पर इन्द्रदेव की क्या हालत होती है।

लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और लाडिली को हर तरह से समझा-बुझाकर दूसरे दिन प्रातःकाल इन्द्रदेव जमानिया की तरफ रवाना हुए।

बयान - 10

अब हम अपने पाठकों को काशीपुरी में एक चौमंजिले मकान के ऊपर ले चलते हैं। यह निहायत संगीन और मजबूत बना हुआ है। नीचे से ऊपर तक गेरू से रंगे रहने के कारण देखने वाला तुरंत कह देगा कि यह किसी गुसाईं का मठ है। काशी के मठधारी गुसाईं नाम ही के साधु या गुसाईं होते हैं, वास्तव में उनकी दौलत, उनका व्यापार, उनका रहन-सहन और बर्ताव किसी तरह गृहस्थों और बनियों से कम नहीं होता

बल्कि दो हाथ ज्यादे ही होता है। अगर किसी ने धर्म और शास्त्र पर कृपा करके गुसाईंपने की कोई निशानी रख भी ली तो केवल इतना ही कि एक टोपी गेरुए रंग की सिर पर या गेरुए रंग का एक दुपट्टा कन्धे पर रख लिया सो भी भरसक रेशमी और बेशकीमत तो होना ही चाहिए बस, अस्तु इस समय जिस मकान में हम अपने पाठकों को ले चलते हैं देखने वाले उस मकान को भी किसी ऐसे ही साधु या गुसाईं का मठ कहेंगे पर वास्तव में ऐसा नहीं है। इस मकान के अन्दर कोई विचित्र मनुष्य रहता है और उसके काम भी बड़े ही अनूठे हैं।

यह मकान कई मंजिल का है। नीचे वाली तीनों मंजिलों को छोड़कर इस समय हम ऊपर वाली चौथी मंजिल पर चलते हैं जहां एक छोटे से कमरे में तीन औरतें बैठी हुई आपस में बातें कर रही हैं। रात दो पहर से कुछ ज्यादे हो चुकी है। कमरे के अन्दर यद्यपि बहुत से शीशे लगे हैं मगर रोशनी सिर्फ एक शमादान और एक दीवारगीर की ही हो रही है। शमादान फर्श के ऊपर जल रहा है जहां तीनों औरतें बैठी हैं। उनमें एक औरत तो निहायत हसीन और नाजुक है और यद्यपि उसकी उम्र लगभग चालीस वर्ष के पहुंच गई होगी मगर नजाकत, सुडौली और चेहरे का लोच अभी तक कायम है, उसकी बड़ी-बड़ी आंखों में अभी तक गुलाबी डोरियां और मस्तानापन मौजूद है, सिर के बड़े-बड़े और घने बालों में चांदी की तरह चमकने वाले बाल दिखाई नहीं देते और न अलग से देखने में ज्यादे उम्र की ही मालूम पड़ती है, साथ ही इसके बाली-पत्ती, गोप सिकरी, कड़े, छन्द और अंगूठियों की तरफ ध्यान देने से वह रुपये वाली भी मालूम पड़ती है। उसके पास बैठी हुई दोनों औरतें भी उसी की तरह कमसिन तो हैं पर खूबसूरत नहीं हैं। जो बहुत हसीन और इस मकान की मालिक औरत है उसका नाम बेगम[1] है और बाकी की दोनों औरतों का नाम नौरतन और जमालो है।

बेगम - चाहे जैपालसिंह गिरफ्तार हो गया हो मगर भूतनाथ उसका मुकाबला नहीं कर सकता और न भूतनाथ उसे अपनी हिफाजत ही में रख सकता है।

जमालो - ठीक है, मगर जब लक्ष्मीदेवी और राजा वीरेन्द्रसिंह को यह मालूम हो गया कि यह असली बलभद्रसिंह नहीं और इसने बहुत बड़ा धोखा देना चाहा था तो वे उसे जीता कब छोड़ेंगे!

बेगम - तो क्या वह खाली इतने ही कसूर पर मारा जायेगा कि उसने अपने को बलभद्रसिंह जाहिर किया?

जमालो - क्या यह छोटा-सा कसूर है! फिर असली बलभद्रसिंह का पता लगाने के लिए भी तो लोग उसे दिक करेंगे।

बेगम - अगर इन्साफ किया जायेगा तो जैपालसिंह गदाधरसिंह से ज्यादे दोषी न ठहरेगा, ऐसी अवस्था में मुझे यह आशा नहीं होती कि राजा वीरेन्द्रसिंह उसे प्राणदण्ड देंगे।

नौरतन - राजा वीरेन्द्रसिंह चाहे उसे प्राणदण्ड की आज्ञा न भी दें मगर इन्द्रदेव उसे कदापि जीता न छोड़ेगा और यह बात बहुत ही बुरी हुई कि राजा वीरेन्द्रसिंह ने उसे इन्द्रदेव के हवाले कर दिया।

बेगम - जो हो मगर जिस समय मैं उन लोगों के सामने जा खड़ी होऊंगी उस समय जैपाल को छुड़ा ही लाऊंगी, क्योंकि उसी के बदौलत अमीरी कर रही हूं और उसके लिए नीच से नीच काम करने को भी तैयार हूं।

जमालो - सो कैसे क्या तुम असली बलभद्रसिंह के साथ उसका बदला करोगी?

बेगम - हां मैं इन्द्रदेव और लक्ष्मीदेवी से कहूंगी कि तुम जैपालसिंह को मेरे हवाले करो तो असली बलभद्रसिंह को तुम्हारे हवाले कर दूंगी। अफसोस तो इतना ही है कि गदाधरसिंह की तरह जैपालसिंह दिलावर और जीवट का आदमी नहीं है। अगर जैपालसिंह के कब्जे में बलभद्रसिंह होता तो वह थोड़ी ही तकलीफ में इन्द्रदेव या लक्ष्मीदेवी को उसका हाल बता देता।

जमालो - ठीक है मगर जब बलभद्रसिंह तुम्हारे कब्जे से निकल जायगा तब जैपालसिंह तुम्हारी इज्जत और कदर क्यों करेगा और क्यों दबेगा सिवाय इसके अब तो दारोगा भी स्वतन्त्र नहीं रहा जिसके भरोसे पर जैपाल कूदता था और तुम्हारा घर भरता था।

बेगम - (कुछ सोचकर) हां बहिन, सो तो तुम सच कहती हो। और बलभद्रसिंह को छोड़ने से पहिले ही मुझे अपना घर ठीक कर लेना चाहिए, मगर ऐसा करने में भी दो बातों की कसर पड़ती है।

जमालो - वह क्या?

बेगम - एक तो वीरेन्द्रसिंह के पक्ष वाले मुझ पर यह दोष लगावेंगे कि तूने बलभद्रसिंह को क्यों कैद कर रक्खा था, दूसरे जब से मनोरमा के हाथ तिलिस्मी

खंजर लगा है तब से उसका दिमाग आसमान पर चढ़ गया है, वह मुझसे कसम खाकर कह गई है कि 'थोड़े ही दिनों

1. बेगम नाम से मुसलमान न समझना चाहिए।

में राजा वीरेन्द्रसिंह और उनके पक्ष वालों को इस दुनिया से उठा दूंगी'। अगर उसका कहना सच हुआ और उसने फिर मायारानी को जमानिया की गद्दी पर ला बैठाया तो मायारानी मुझ पर दोष लगावेंगी कि तूने जैपाल को इतने दिनों तक क्यों छिपा रक्खा और दारोगा से मिलकर मुझे धोखे में क्यों डाला।

नौरतन - बेशक ऐसा ही होगा, मगर इस बात को मैं कभी नहीं मान सकती कि अकेली मनोरमा एक तिलिस्मी खंजर पाकर राजा वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों का मुकाबला करेगी और उनके पक्ष वालों को इस दुनिया से उठा देगी। क्या उन लोगों के पास तिलिस्मी खंजर न होगा?

जमालो - मैं भी यही कहने वाली थी, मैंने इस विषय पर बहुत गौर किया मगर सिवा इसके मेरा दिल और कुछ भी नहीं कहता कि राजा वीरेन्द्रसिंह, उनके लड़के और उनके ऐयारों का मुकाबला करने वाला आज दिन इस दुनिया में कोई भी नहीं है, और एक बड़े भारी तिलिस्म के राजा गोपालसिंह भी प्रकट हो गये हैं। ऐसी अवस्था में मायारानी और उनके पक्ष वालों की जीत कदापि नहीं हो सकती।

बेगम - ऐसा ही है, और गदाधरसिंह भी किसी न किसी तरह अपनी जान बचा ही लेगा देखो इतना बखेड़ा हो जाने पर भी लोगों ने गदाधरसिंह को जिसने अपना नाम अब भूतनाथ रख लिया है और अब वह चारों तरफ उपद्रव मचा रहा है ताज्जुब नहीं कि वह जमीन की मिट्टी सूंघता हुआ मेरे घर में भी आ पहुंचे! यद्यपि उसे मेरा पता कुछ भी मालूम नहीं है मगर वह विचित्र आदमी है, मिट्टी और हवा से मिल गई चीज का भी पता लगा लेता है। (ऊंची सांस लेकर) अगर मुझसे और उससे लड़ाई न हो गई होती तो आज मैं भी तीन हाथ की ऊंची गद्दी पर बैठने का साहस करती, मगर अफसोस, भूतनाथ ने मेरे साथ बहुत ही बुरा सलूक किया! (कुछ सोचकर) यदि बलभद्रसिंह को लेकर मैं राजा वीरेन्द्रसिंह के पास चली जाऊं और भूतनाथ के ऊपर नालिश करूं तो मैं बहुत अच्छी रहूं! मेरे मुकद्दमे की जवाबदेही भूतनाथ कदापि नहीं कर सकता और राजा साहब उसे जरूर प्राणदण्ड की आज्ञा देंगे। बलभद्रसिंह को छिपा रखने का यदि मुझ पर दोष लगाया जायगा तो मैं कह सकूंगी कि जिस जमाने में जो राजा होता है प्रजा उसी का पक्ष करती है, अगर मैंने मायारानी और दारोगा के

जमाने में उन लोगों का पक्ष किया तो कोई बुरा नहीं किया। मैं इस बात को बिल्कुल नहीं जानती थी बल्कि दारोगा भी नहीं जानता था कि राजा गोपालसिंह को मायारानी ने कैद कर रक्खा है। अस्तु अब आपका राज्य हुआ है तो मैं आपकी सेवा में उपस्थित हुई हूं।

जमालो - बात तो बहुत अच्छी है, फिर इस बात में देर क्यों कर रही हो इस काम को जहां तक जल्द करोगी तुम्हारा भला होगा।

बेगम - (कुछ सोचकर) अच्छी बात है, ऐसा करने के लिए मैं कल ही यहां से रवाना हो जाऊंगी।

इतने ही में दरवाजे के बाहर से आवाज आई, "मगर भूतनाथ को भी तो अपनी जान प्यारी है, वह ऐसा करने के लिए तुम्हें जाने कब देगा?'

तीनों ने चौंककर दरवाजे की तरफ निगाहें कीं और भूतनाथ कमरे के अन्दर आते हुए देखा।

बेगम - (भूतनाथ से) आओ जी मेरे पुराने दोस्त, भला तुमने मेरे सामने आने का साहस तो किया!

भूतनाथ - साहस और जीवट तो हमारा असली काम है।

बेगम - (अपनी बाईं तरफ बैठने का इशारा करके) इधर बैठ जाओ। मालूम होता है कि पुरानी बातों को तुम बिल्कुल ही भूल गये।

भूतनाथ - (बेगम की दाहिनी तरफ बैठकर) हम दुनिया में आने से भी छः महीने पहिले की बात याद रखने वाले आदमी हैं, आज वह दिन नहीं है जिस दिन तुम्हें और जैपाल को देखने के साथ ही डर से मेरे बदन का खून रगों के अन्दर ही जम जाता था बल्कि आज का दिन उसके बिल्कुल विपरीत है।

बेगम - अर्थात् आज तुम मुझे देखकर खुश होते हो!

भूतनाथ - बेशक!

बेगम - क्या आज तुम मुझसे बिल्कुल नहीं डरते?

भूतनाथ - रत्ती भर नहीं!

बेगम - क्या अब मैं अगर राजा वीरेन्द्रसिंह के यहां तुम पर नालिश करूं तो मेरा मुकद्दमा सुना न जायगा और तुम माफ छूट जाओगे?

भूतनाथ - मगर अब तुम्हें राजा वीरेन्द्रसिंह के सामने पहुंचने ही कौन देगा?

बेगम - (क्रोध से) रोकेगा ही कौन?

भूतनाथ - गदाधरसिंह, जो तुम्हें अच्छी तरह सता चुका है और आज फिर सताने के लिए आया है!

बेगम - (क्रोध को पचाकर और कुछ सोचकर) मगर यह बताओ कि तुम बिना इत्तिला कराये यहां चले क्यों आये और पहरे वाले सिपाहियों ने तुम्हें आने कैसे दिया?

भूतनाथ - तुम्हारे दरवाजे पर कौन है जिसकी जुबानी मैं इत्तिला करवाता या जो मुझे यहां आने से रोकता?

बेगम - क्या पहरे के सिपाही सब मर गये?

भूतनाथ - मर ही गये होंगे!

बेगम - क्या सदर दरवाजा खुला हुआ और सुनसान है?

भूतनाथ - सुनसान तो है मगर खुला हुआ नहीं है, कोई चोर न घुस आवे इस ख्याल से आती समय मैं सदर दरवाजा भीतर से बन्द करता आया हूं। डरो मत, कोई तुम्हारी रकम उठाकर न ले जायगा।

बेगम - (मन ही मन चिढ़के) जमालो, जरा नीचे जाकर देख तो सही कम्बख्त सिपाही सब क्या कर रहे हैं।

भूतनाथ - (जमालो से) खबरदार, यहां से उठना मत, इस समय इस मकान में मेरी हुकूमत है बेगम या जैपाल की नहीं! (बेगम से) अच्छा अब सीधी तरह से बता दो कि बलभद्रसिंह को कहां पर कैद कर रक्खा है?

बेगम - मैं बलभद्रसिंह को क्या जानूं?

भूतनाथ - तो अभी किसको लेकर राजा वीरेन्द्रसिंह के पास जाने के लिये तैयार हो गई थी?

बेगम - तेरे बाप को लेकर जाने वाली थी!

इतना सुनते ही भूतनाथ ने कसके एक चपत बेगम के गाल पर जमाई जिससे वह तिलमिला गई और कुछ ठहरने के बाद तकिये के नीचे से छुरा निकालकर भूतनाथ पर झपटी। भूतनाथ ने बाएं हाथ से उसकी कलाई पकड़ ली और दाहिने हाथ से तिलिस्मी खंजर निकालकर उसके बदन में लगा दिया, साथ ही इसके फुर्ती से नौरतन और जमालो के बदन में भी तिलिस्मी खंजर लगा दिया जिससे बात की बात में सभी बेहोश होकर जमीन पर लम्बी हो गईं। इसके बाद भूतनाथ ने बड़े गौर से चारों तरफ देखना शुरू किया। इस कमरे में दो आलमारियां थीं जिनमें बड़े-बड़े ताले लगे हुए थे, भूतनाथ ने तिलिस्मी खंजर मारकर एक आलमारी का कब्जा काट डाला और आलमारी खोलकर उसके अन्दर की चीजें देखने लगा। पहिले एक गठरी निकाली जिसमें बहुत से कागज बंधे हुए थे। शमादान के सामने वह गठरी खोली और एक-एक करके कागज देखने और पढ़ने लगा, यहां तक कि सब कागज देख गया और शमादान में लगा-लगाकर सब जलाकर खाक कर दिये। इसके बाद एक सन्दूकड़ी निकाली जिसमें ताला लगा हुआ था। इस सन्दूकड़ी में भी कागज भरे हुए थे। भूतनाथ ने उस कागजों को भी जला दिया, इसके बाद फिर आलमारी में ढूंढ़ना शुरू किया मगर और कोई चीज उसके काम की न निकली।

भूतनाथ ने अब उस दूसरी आलमारी का कब्जा भी खंजर से काट डाला और अन्दर की चीजों को ध्यान देकर देखना शुरू किया। इस आलमारी में यद्यपि बहुत-सी चीजें भरी हुई थीं मगर भूतनाथ ने केवल तीन चीजें उसमें से निकाल लीं। एक तो दस-बारह पन्ने की छोटी-सी किताब थी जिसे पाकर भूतनाथ बहुत खुश हुआ और चिराग के सामने जल्दी-जल्दी उलट-पलटकर दो-तीन पन्ने पढ़ गया, दूसरी एक ताली का गुच्छा था, भूतनाथ ने उसे भी ले लिया, और तीसरी चीज एक हीरे की अंगूठी थी जिसके साथ एक पुर्जा भी बंधा हुआ था। यह अंगूठी एक डिबिया के अन्दर रक्खी हुई थी। भूतनाथ ने अंगूठी में से पुरजा खोलकर पढ़ा और इसके पाने से बहुत प्रसन्न होकर धीरे से बोला, "बस अब मुझे और किसी चीज की जरूरत नहीं है।"

इन कामों से छुट्टी पाकर भूतनाथ बेगम के पास आया जो अभी तक बेहोश पड़ी हुई थी और उसकी तरफ देखकर बोला, "अब यह मेरा कुछ बिगाड़ नहीं सकती, ऐसी अवस्था में एक औरत के खून से हाथ रंगना व्यर्थ है।"

भूतनाथ हाथ में शमादान लिए निचले खण्ड में उतर गया जहां उसके साथी दो आदमी हाथ में नंगी तलवार लिये हुए मौजूद थे। उसने अपने साथियों की तरफ

देखकर कहा, "बस हमारा काम हो गया। बलभद्रसिंह इसी मकान में कैद है, उसे निकालकर यहां से चल देना चाहिए।" इतना कहकर भूतनाथ ने शमादान अपने एक साथी के हाथ में दे दिया और एक कोठरी के दरवाजे पर जा खड़ा हुआ जिसमें दोहरा ताला लगा हुआ था। तालियों का गुच्छा जो ऊपर से लाया था उसी में से ताली लगाकर ताले खोले और अपने आदमियों को साथ लिये हुए कोठरी के अन्दर घुसा। वह कोठरी खाली थी मगर उसमें से एक दूसरी कोठरी में जाने के लिए दरवाजा था और उसकी जंजीर में भी ताला लगा हुआ था। ताली लगाकर उस ताले को भी खोला और दूसरी कोठरी के अन्दर गया। इसी कोठरी में लक्ष्मीदेवी और कमलिनी और लाडिली का बाप बलभद्रसिंह कैद था।

दरवाजा खोलते समय जंजीर खटकने के साथ ही बलभद्रसिंह चैतन्य हो गया था। जिस समय उसकी निगाह यकायक भूतनाथ पर पड़ी वह चौंक उठा और ताज्जुब भरी निगाहों से भूतनाथ को देखने लगा। भूतनाथ ने भी ताज्जुब की निगाह से बलभद्रसिंह को देखा और अफसोस किया क्योंकि बलभद्रसिंह की अवस्था बहुत ही खराब हो रही थी। शरीर सूख के कांटा हो गया था, चेहरे पर और बदन में झुर्रियां पड़ गई थीं, सिर-मूंछ और दाढ़ी के बाल तथा नाखून इतने बढ़ गये थे कि जंगली मनुष्य में और उसमें कुछ भी भेद न जान पड़ता था, अंधेरे में रहते-रहते बदन पीला पड़ गया था, सूरत-शक्ल से भी बहुत ही डरावना मालूम पड़ता था। एक कम्बल, मिट्टी की ठिलिया और पीतल का लोटा बस यही उसकी बिसात थी, कोठरी में और कुछ भी न था। भूतनाथ को देखकर यह जिस ढंग से चौंका और कांपा उसे देख भूतनाथ ने गर्दन नीची कर ली और तब धीरे से कहा, "आप उठिये और जल्दी निकल चलिये, मैं आपको छुड़ाने के लिए आया हूं।"

बलभद्र - (आश्चर्य से) क्या तू मुझे छुड़ाने के लिए आया है! क्या यह बात सच है?

भूतनाथ - जी हां।

बलभद्र - मगर मुझे विश्वास नहीं होता।

भूत - खैर इस समय आप यहां से निकल चलिये, फिर जो कुछ सवाल-जवाब या सोच-विचार करना हो कीजियेगा।

बलभद्र - (खड़े होकर) कदाचित् यह बात सच हो! और अगर झूठ भी हो तो कोई हर्ज नहीं, क्योंकि मैं इस कैद में रहने के बनिस्बत जल्द मर जाना अच्छा समझता हूं!

भूतनाथ ने इस बात का कुछ जवाब न दिया और बलभद्रसिंह को अपने पीछे-पीछे आने का इशारा किया। बलभद्रसिंह इतना कमजोर हो गया था कि उसे मकान के नीचे उतरना कठिन जान पड़ता था इसलिये भूतनाथ ने उसका हाथ थाम लिया और नीचे उतारकर दरवाजे के बाहर ले गया। मकान के दरवाजे के बाहर बल्कि गली-भर में सन्नाटा छाया हुआ था क्योंकि यह मकान ऐसी अंधेरी और सन्नाटे की गली में था कि वहां शायद महीने में एक दफे किसी भले आदमी का गुजर नहीं होता होगा। दरवाजे पर पहुंचकर भूतनाथ ने बलभद्रसिंह से पूछा, "आप घोड़े पर सवार हो सकते हैं'

इसके जवाब में बलभद्रसिंह ने कहा, "मुझे उचककर सवार होने की ताकत तो नहीं हां अगर घोड़े पर बैठा दोगे तो गिरूंगा नहीं!"

भूतनाथ ने शमादान मकान के भीतर चौक में रख दिया और तब बलभद्रसिंह को आगे बढ़ा ले गया। थोड़ी ही दूर पर एक आदमी दो कसे-कसाये घोड़ों की बागडोर थामे बैठा हुआ था। भूतनाथ एक घोड़े पर बलभद्रसिंह को सवार कराके दूसरे घोड़े पर आप जा बैठा और अपने तीन आदमियों को कुछ कहकर वहां से रवाना हो गया।

बयान - 11

रात बहुत कम बाकी थी जब बेगम, नौरतन और जमालो की बेहोशी दूर हुई।

बेगम - (चारों तरफ देखकर) हैं, यहां तो बिल्कुल अन्धकार हो रहा है, जमालो, तू कहां है?

नौरतन - जमालो नीचे गई है।

बेगम - क्यों?

नौरतन - जब हम दोनों होश में आईं तो यहां बिल्कुल अंधकार देखकर घबराने लगीं। नीचे चौक में कुछ रोशनी मालूम होती थी, जमालो ने झांककर देखा तो यहां वाला शमादान चौक में बलता पाया, आहट लेने पर जब मालूम हुआ कि नीचे कोई भी नहीं है तो शमादान लेने के लिए नीचे गई है।

बेगम - हाय, यह क्या हुआ?

नौरतन - पहिले रोशनी आने दो तो कहूंगी, लो जमालो आ गई।

बेगम - क्यों बहिन जमालो, क्या नीचे बिल्कुल सन्नाटा है?

जमालो - (शमादान जमीन पर रखकर) हां बिल्कुल सन्नाटा है, तुम्हारे सब आदमी भी न मालूम कहां गायब हो गये।

बेगम - हाय-हाय, यहां तो दोनों आलमारियां टूटी पड़ी हैं! हैं-हैं, मालूम होता है कि कागज सभी जलाकर राख कर दिये गये! (एक आलमारी के पास जाकर और अच्छी तरह देखकर) बस सर्वनाश हो गया! ताज्जुब यह है कि उसने मुझे जीता क्यों छोड़ दिया!

दोनों आलमारियों और उनकी चीजों की खराबी देखकर बेगम की दशा पागलों जैसी हो गई। उसकी आंखों से आंसू जारी थे और वह घबड़ाकर चारों तरफ घूम रही थी। थोड़ी ही देर में सवेरा हो गया और तब वह मकान के नीचे आई। एक कोठरी के अन्दर से कई आदमियों के चिल्लाने की आवाज सुनाई पड़ी, आवाज से वह पहचान गई कि उसके सिपाही लोग उसमें बन्द हैं। जब जंजीर खोली तो वे सब बाहर निकले और घबड़ाहट के साथ चारों तरफ देखने लगे। बेगम के पास जाने के पहिले ही भूतनाथ ने इस आदमियों को तिलिस्मी खंजर की मदद से बेहोश करके इस कोठरी के अन्दर बन्द कर दिया था।

बेगम ने सभों से बेहोशी का सबब पूछा जिसके जवाब में उन्होंने कहा कि "एक आदमी ने आकर एक खंजर यकायक हम लोगों के बदन से लगाया, हम लोग कुछ भी न सोच सके कि वह पागल है या चोर, बस एकदम बेहोश हो गये और तनोबदन की सुध जाती रही। फिर क्या हुआ यह हम नहीं जानते, जब होश में आये तो अपने को कोठरी के अन्दर पाया।"

इसके बाद बेगम ने उन लोगों से कुछ भी न पूछा और नौरतन तथा जमालो को साथ लेकर ऊपर वाले खण्ड में चली गई जहां बलभद्रसिंह कैद था। जब बेगम ने उस कोठरी को खुला पाया और बलभद्रसिंह को उसमें न देखा तब और हताश हो गई और जमालो की तरफ देखकर बोली, "बहिन, तुमने सच कहा था कि राजा वीरेन्द्रसिंह के पक्षपातियों का मनोरमा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती! देखो भूतनाथ के पास वैसा ही तिलिस्मी खंजर मौजूद है और उस खंजर की बदौलत उसने जो काम किया उसे भी तुम देख चुकी हो! अगर मैं इसका बदला भूतनाथ से लिया भी चाहूं तो नहीं ले सकती क्योंकि अब न तो मेरे कब्जे में बलभद्रसिंह रहा और न वे सबूत रह गये जिनकी बदौलत मैं भूतनाथ को दबा सकती थी। हाय, एक दिन वह था कि मेरी सूरत देखकर

भूतनाथ अधमुआ हो जाता था और एक आज का दिन है कि मैं भूतनाथ का कुछ भी नहीं कर सकती। न मालूम इस मकान का और मेरा पता उसे कैसे मालूम हुआ और इतना कर गुजरने पर भी उसने मेरी जान क्यों छोड़ दी निःसन्देह इसमें भी कोई भेद है। उसने अगर मुझे छोड़ दिया तो सुखी रहने के लिए नहीं बल्कि इसमें भी उसने कुछ अपना फायदा सोचा होगा।"

जमालो - बेशक ऐसा ही है, शुक्र करो कि वह तुम्हारी दौलत नहीं ले गया नहीं तो बड़ा ही अन्धेर हो जाता और तुम टुकड़े-टुकड़े को मोहताज हो जातीं। अब तुम इसका भी निश्चय रक्खो कि जैपालसिंह की जान कदापि नहीं बच सकती।

बेगम - बेशक ऐसा ही है, अब तुम्हारी क्या राय है?

जमालो - मेरी राय तो यही है कि अब तुम एक पल भी इस मकान में न ठहरो और अपनी जमा-पूंजी लेकर यहां से चल दो। तुम्हारे पास इतनी दौलत है कि किसी दूसरे शहर में आराम से रहकर अपनी जिंदगी बिता सको जहां वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों को जाने की जरूरत न पड़े!

बेगम - तुम्हारी राय बहुत ठीक है, तो क्या तुम दोनों मेरा साथ दोगी?

जमालो - मैं जरूर तुम्हारा साथ दूंगी।

नौरतन - मैं भी ऐसी अवस्था में तुम्हारा साथ नहीं छोड़ सकती। जब सुख के दिनों में तुम्हारे साथ रही तो क्या अब दुःख के जमाने में तुम्हारा साथ छोड़ दूंगी ऐसा नहीं हो सकता।

बेगम - अच्छा तो अब निकल भागने की तैयारी करनी चाहिए।

जमालो - जरूर।

इतने ही में मकान के बाहर बहुत से आदमियों के शोरगुल की आवाज इन तीनों को मालूम पड़ी। बेगम की आज्ञानुसार पता लगाने के लिए जमालो नीचे उतर गई और थोड़ी ही देर में लौट आकर बोली, "हैं-हैं, गजब हो गया। राजा साहब के सिपाहियों ने मकान को घेर लिया और तुम्हें गिरफ्तार करने के लिए आ रहे हैं।" जमालो इससे ज्यादे न कहने पाई थी कि धड़धड़ाते हुए बहुत से सरकारी सिपाही मकान के ऊपर चढ़ आए और उन्होंने बेगम, नौरतन और जमालो को गिरफ्तार कर लिया।

बयान - 12

काशीपुरी से निकलकर भूतनाथ ने सीधे चुनारगढ़ का रास्ता लिया। पर दिन चढ़े तक भूतनाथ और बलभद्रसिंह घोड़े पर सवार बराबर चले गये और इस बीच में उन दोनों में किसी तरह की बातचीत न हुई। जब वे दोनों जंगल के किनारे पहुंचे तो बलभद्रसिंह ने भूतनाथ से कहा, "अब मैं थक गया हूं, घोड़े पर मजबूती के साथ नहीं बैठ सकता। वर्षों की कैद ने मुझे बिल्कुल बेकाम कर दिया। अब मुझमें दस कदम भी चलने की हिम्मत नहीं रही, अगर कुछ देर तक कहीं ठहरकर आराम कर लेते तो अच्छा होता।"

भूत - बहुत अच्छा, थोड़ी दूर और चलिये, इसी जंगल में किसी अच्छे ठिकाने जहां पानी भी मिल सकता हो, ठहरकर आराम कर लेंगे।

बलभद्र - अच्छा तो अब घोड़े को तेज मत चलाओ।

भूत - (घोड़े की तेजी कम करके) बहुत खूब।

बलभद्र - क्यों भूतनाथ, क्या वास्तव में तुमने मुझे कैद से छुड़ाया है या मुझे धोखा हो रहा है?

भूत - (मुस्कुराकर) क्या आपको इस मैदान की हवा मालूम नहीं होती, या आप अपने को घोड़े पर स्वतन्त्र नहीं देखते फिर ऐसा सवाल क्यों करते हैं?

बलभद्र - यह सब-कुछ ठीक है मगर अभी तक मुझे विश्वास नहीं होता कि भूतनाथ के हाथों से मुझे मदद पहुंचेगी, यदि तुम मेरी मदद किया चाहते तो क्या आज तक मैं कैदखाने ही में पड़ा सड़ा करता! क्या तुम नहीं जानते थे कि मैं कहां और किस अवस्था में हूं?

भूत - बेशक मैं नहीं जानता था कि आप कहां और कैसी अवस्था में हैं। उन पुरानी बातों को जाने दीजिये मगर इधर जब से मैंने आपकी लड़की श्यामा (कमलिनी) की ताबेदारी की है तब से बल्कि इससे भी बरस-डेढ़ बरस पहिले ही से मुझे आपकी खबर न थी। मुझे अच्छी तरह विश्वास दिलाया गया था कि अब आप इस दुनिया में नहीं रहे। यदि आज के दो महीने पहिले भी मुझे मालूम हो गया होता कि आप जीते हैं और कहीं कैद हैं तो मैं आपको कैद से छुड़ाकर कृतार्थ हो गया होता।

बलभद्र - (आश्चर्य से) क्या श्यामा जीती है?

भूतनाथ - हां जीती है।

बलभद्र - तो लाडिली भी जीती होगी?

भूत - हां वह भी जीती है।

बल - ठीक है, क्योंकि वे दोनों मेरे साथ उस समय जमानिया में न आई थीं जब लक्ष्मीदेवी की शादी होने वाली थी। पहिले मुझे लक्ष्मीदेवी के भी जीते रहने की आशा न थी, मगर कैद होने के थोड़े ही दिन बाद मैंने सुना कि लक्ष्मीदेवी जीती है और जमानिया की रानी तथा मायारानी कहलाती है।

भूत - लक्ष्मीदेवी के बारे में जो कुछ आपने सुना सब झूठ है, जमाने में बहुत बड़ा उलट-फेर हो गया जिसकी आपको कुछ भी खबर नहीं। वास्तव में मायारानी कोई दूसरी ही औरत थी और लक्ष्मीदेवी ने भी बड़े-बड़े दुःख भोगे परन्तु ईश्वर को धन्यवाद देना चाहिए जिसने दुःख के अथाह समुन्द्र में डूबते हुए लक्ष्मीदेवी के बेड़े को पार कर दिया। अब आप अपनी तीनों लड़कियों को अच्छी अवस्था में पावेंगे। मुझे यह बात पहिले मालूम न थी कि मायारानी वास्तव में लक्ष्मीदेवी नहीं है।

बलभद्र - क्या वास्तव में ऐसी ही बात है क्या सचमुच मैं अपनी तीनों बेटियों को देखूंगा क्या तुम मुझ पर किसी तरह का जुल्म न करोगे और मुझे छोड़ दोगे?

भूत - अब मैं किस तरह अपनी बातों पर आपको विश्वास दिलाऊं। क्या आपके पास कोई ऐसा सबूत है जिससे मालूम हो कि मैंने आपके साथ बुराई की?

बल - सबूत तो मेरे पास कोई भी नहीं मगर मायारानी के दारोगा और जैपाल की जुबानी मैंने तुम्हारे विषय में बड़ी-बड़ी बातें सुनी थीं और कुछ दूसरे जरिये से भी मालूम हुआ है।

भूत - तो बस या तो आप दुश्मनों की बातों को मानिए या मेरी इस खैरखाही को देखिये कि कितनी मुश्किल से आपका पता लगाया और किस तरह जान पर खेलकर आपको छुड़ा ले चला हूं।

बल - (लम्बी सांस लेकर) खैर जो हो, आज यदि तुम्हारी बदौलत मैं किसी तरह की तकलीफ न पाकर अपनी तीनों लड़कियों से मिलूंगा तो तुम्हारा कसूर यदि कुछ हो तो मैं माफ करता हूं।

भूत - इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूं। लीजिए यह जगह बहुत अच्छी है, घने पेड़ों की छाया है और पगडण्डी से बहुत हटकर भी है।

बल - ठीक तो है, अच्छा तुम उतरो और मुझे भी उतारो।

दोनों ने घोड़ा रोका भूतनाथ घोड़े से उतर पड़ा और उसकी बागडोर एक डाल से अड़ाने के बाद धीरे से बलभद्रसिंह को भी नीचे उतारा। जीनपोश बिछाकर उन्हें आराम करने के लिए कहा और तब दोनों घोड़ों की पीठ खाली करके लम्बी बागडोर के सहारे एक पेड़ के साथ बांध दिया जिससे वे भी लोट-पोटकर थकावट मिटा लें और घास चरें।

यहां पर भूतनाथ ने बलभद्रसिंह की बड़ी खातिर की। ऐयारी के बटुए में से उस्तुरा निकालकर अपने हाथ से इनकी हजामत बनाई, दाढ़ी मूड़ी, कैंची लगाकर सिर के बाल दुरुस्त किए, इसके बाद स्नान कराया और बदलने के लिए यज्ञोपवीत दिया। आज बहुत दिनों के बाद बलभद्रसिंह ने चश्मे के किनारे बैठकर सन्ध्यावन्दन किया और देर तक सूर्य भगवान की स्तुति करते रहे। जब सब तरह से दोनों आदमी निश्चिन्त हुए तो भूतनाथ ने खुर्जी[1] में से कुछ मेवा निकालकर खाने के लिए बलभद्रसिंह को दिया और आप भी खाया। अब बलभद्रसिंह को निश्चय हो गया कि भूतनाथ मेरे साथ दुश्मनी नहीं करता और उसने नेकी की राह से मुझे भारी कैदखाने से छुड़ाया है।

बलभद्र - गदाधरसिंह, शायद तुमने थोड़े ही दिनों से अपना नाम भूतनाथ रक्खा है?

भूतनाथ - जी हां, आजकल मैं इसी नाम से मशहूर हूं?

बलभद्र - अस्तु मैं बड़ी खुशी से तुम्हें धन्यवाद देता हूं क्योंकि अब मुझे निश्चय हो गया कि तुम मेरे दुश्मन नहीं हो।

भूत - (धन्यवाद के बदले में सलाम करके) मगर मेरे दुश्मनों ने मेरी तरफ से आपके कान बहुत भरे हैं और वे बातें ऐसी हैं कि यदि आप राजा वीरेन्द्रसिंह के सामने उन्हें कहेंगे तो मैं उनकी आंखों से उतर जाऊंगा।

बलभद्र - नहीं-नहीं, मैं प्रतिज्ञापूर्वक कहता हूं कि तुम्हारे विषय में कोई ऐसी बात किसी के सामने न कहूंगा जिससे तुम्हारा नुकसान हो।

भूतनाथ - (पुनः सलाम करके) और मैं आशा करता हूं कि समय पड़ने पर आप मेरी सहायता भी करेंगे?

बलभद्र - मैं सहायता करने योग्य तो नहीं हूं मगर हां यदि कुछ कर सकूंगा तो अवश्य करूंगा।

भूतनाथ - इत्तिफाक से राजा वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों ने जैपालसिंह को गिरफ्तार कर लिया है जो आपकी सूरत बनकर लक्ष्मीदेवी को धोखा देने गया था। जब उसे अपने बचाव का कोई ढंग न सूझा तो उसने आपके मार डालने का दोष मुझ पर लगाया। मैं स्वप्न में भी नहीं सोच सकता था कि आप जीते हैं, परन्तु ईश्वर को धन्यवाद देना चाहिए कि यकायक आपके जीते रहने का शक मुझे हुआ और धीरे-धीरे वह पक्का होता गया तथा मैं आपकी खोज करने लगा। अब आशा है कि आप स्वयम् मेरी तरफ से जैपालसिंह का मुंह तोड़ेंगे।

बलभद्र - (क्रोध से) जैपाल मेरे मारने का दोष तुम पर लगाके आप बचा चाहता है

भूतनाथ - जी हां।

बलभद्र - उसकी ऐसी की तैसी! उसने तो मुझे ऐसी-ऐसी तकलीफें दी हैं कि मेरा ही जी जानता है। अच्छा यह बताओ इधर क्या-क्या मामले हुए और राजा वीरेन्द्रसिंह को जमानिया तक पहुंचने की नौबत क्यों आई

1. एक विशेष प्रकार का थैला।

भूतनाथ ने जब से कमलिनी की ताबेदारी कबूल की थी, कुछ हाल कुंअर इन्द्रजीतसिंह, आनन्दसिंह, मायारानी, दारोगा, कमलिनी, दिग्विजयसिंह और राजा गोपालसिंह वगैरह का बयान किया मगर अपने और जैपालसिंह के मामले में कुछ घटा-बढ़ाकर कहा। बलभद्रसिंह ने बड़े गौर और ताज्जुब से सब बातें सुनीं और भूतनाथ की खैरखाही तथा मर्दानगी की बड़ी तारीफ की। थोड़ी देर तक और बातचीत होती रही इसके बाद दोनों आदमी घोड़े पर सवार हो चुनारगढ़ की तरफ रवाना हुए और पहर भर के बाद उस तिलिस्म के पास पहुंचे जो चुनारगढ़ से थोड़ी दूर पर था और जिसे राजा वीरेन्द्रसिंह ने फतह किया (तोड़ा) था।

काशी से चुनारगढ़ बहुत दूर न होने पर भी इन दोनों को वहां पहुंचने में देर हो गई। एक तो इसलिए कि दुश्मनों के डर से सदर राह छोड़ भूतनाथ चक्कर देता हुआ गया था, दूसरे रास्ते में ये दोनों बहुत देर तक अटके रहे, तीसरे कमजोरी के सबब से बलभद्रसिंह घोड़े को तेज चला भी नहीं सकते थे।

पाठक, इस तिलिस्मी खण्डहर की अवस्था आज दिन वैसी नहीं है जैसी आपने पहिले देखी जब राजा वीरेन्द्रसिंह ने इस तिलिस्म को तोड़ा था। आज इसके चारों तरफ राजा सुरेन्द्रसिंह की आज्ञानुसार बहुत बड़ी इमारत बन गई और अभी तक बन रही है। इस इमारत को जीतसिंह ने अपने ढंग का बनवाया था। इसमें बड़े-बड़े तहखाने, सुरंग और गुप्त कोठरियां, जिनके दरवाजों का पता लगाना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव था, बनकर तैयार हुई है और अच्छे-अच्छे कमरे, सहन, बालाखाने[1] इत्यादि जीतसिंह की बुद्धिमानी का नमूना दिखा रहे हैं। बीच में एक बहुत बड़ा रमना छूटा हुआ है जिसके बीचोंबीच में तो वह खण्डहर है और उसके चारों तरफ बाग लग रहा है। खण्डहर की टूटी हुई इमारत की भी मरम्मत हो चुकी है और अब वह खण्डहर मालूम नहीं होता। भीतर की इमारत का काम बिल्कुल खतम हो चुका है, केवल बाहरी हिस्से में कुछ काम लगा हुआ है सो भी दस-पन्द्रह दिन से ज्यादे का काम नहीं है। जिस समय बलभद्रसिंह को लिए भूतनाथ वहां पहुंचा उस समय जीतसिंह भी वहां मौजूद थे और पन्नालाल, रामनारायण और पण्डित बद्रीनाथ को साथ लिए हुए फाटक के बाहर टहल रहे थे। पन्नालाल, रामनारायण और पण्डित बद्रीनाथ तो भूतनाथ को बखूबी पहिचानते थे, हां जीतसिंह ने शायद उसे नहीं देखा था मगर तेजसिंह ने भूतनाथ की तस्वीर अपने हाथ से तैयार करके जीतसिंह और सुरेन्द्रसिंह के पास भेजी और उसकी विचित्र घटना का समाचार भी लिखा था।

भूतनाथ को दूर से आते हुए देख पन्नापाल ने जीतसिंह से कहा, "देखिये भूतनाथ चला आ रहा है।"

जीतसिंह - (गौर से भूतनाथ को देखकर) मगर यह दूसरा आदमी उसके साथ कौन है?

1. अट्टालिका

पन्ना - मैं इस दूसरे को तो नहीं पहिचानता।

जीत - (बद्रीनाथ से) तुम पहिचानते हो?

इतने में भूतनाथ और बलभद्रसिंह भी वहां पहुंच गये। भूतनाथ ने घोड़े पर से उतरकर जीतसिंह को सलाम किया क्योंकि वह जीतसिंह को बखूबी पहिचानता था। इसके बाद, धीरे से बलभद्रसिंह को भी घोड़े से नीचे उतारा और जीतसिंह की तरफ इशारा करके कहा, "यह तेजसिंह के पिता जीतसिंह हैं" और दूसरे ऐयारों का भी नाम बताया। बलभद्रसिंह का भी परिचय सभों को देकर भूतनाथ ने जीतसिंह से कहा,

"यही बलभद्रसिंह हैं जिनका पता लगाने का बोझ मुझ पर डाला गया था। ईश्वर ने मेरी इज्जत रख ली और मेरे हाथों इन्हें कैद से छुड़ाया! आप तो सब हाल सुन ही चुके होंगे?'

जीत - हां मुझे सब हाल मालूम है, तुम्हारे मुकद्दमे ने तो हम लोगों का दिल अपनी तरफ ऐसा खींच लिया है कि दिन-रात उसी का ध्यान रहता है, मगर तुम यकायक इस तरफ कैसे आ निकले और इन्हें कहां पाया?

भूत - मैं इन्हें काशीपुर से छुड़ा ला रहा हूं, दुश्मनों के खौफ से दक्खिन दबता हुआ चक्कर देकर आना पड़ा इसी से अब यहां पहुंचने की नौबत आई नहीं तो अब तक कब का चुनार पहुंच गया होता। राजा वीरेन्द्रसिंह की सवारी चुनार की तरफ रवाना हो गई थी इसलिए मैं भी इन्हें लेकर सीधे चुनार ही आया।

जीत - बहुत अच्छा किया कि यहां चले आये, कल राजा वीरेन्द्रसिंह भी यहां पहुंच जायेंगे और उनका डेरा भी इसी मकान में पड़ेगा। किशोरी, कामिनी और कमला वाला हृदय-विदारक समाचार तो तुमने सुना ही होगा?

भूतनाथ - (चौंककर) क्या - क्या मुझे कुछ भी नहीं मालूम!

जीत - (कुछ सोचकर) अच्छा आप लोग जरा आराम कर लीजिये तो सब हाल कहेंगे क्योंकि बलभद्रसिंह कैद की मुसीबत उठाने के कारण बहुत सुस्त और कमजोर हो रहे हैं। (पन्नालाल की तरफ देखकर) पूरब वाले नम्बर दो के कमरे में इन लोगों को डेरा दिलवाओ और हर तरह के आराम का बन्दोबस्त करो, इनकी खातिरदारी और हिफाजत तुम्हारे ऊपर है।

पन्ना - जो आज्ञा।

हमारे ऐयारों को इस बात की उत्कण्ठा बहुत ही बढ़ी-चढ़ी थी कि किसी तरह भूतनाथ के मुकद्दमे का फैसला हो और विचित्र घटना का हाल जानने में आये क्योंकि इस उपन्यास भर में जैसा भूतनाथ का अद्भुत रहस्य है वैसा और किसी पात्र का नहीं है। यही कारण था कि उनको इस बात की बहुत बड़ी खुशी हुई कि भूतनाथ असली बलभद्रसिंह को छुड़ाकर ले आया और कल राजा वीरेन्द्रसिंह के यहां आ पहुंचने पर इसका विचित्र हाल भी मालूम हो जायेगा।

(पन्द्रहवां भाग समाप्त

चंद्रकांता संतति - Chandrakanta Santati

चंद्रकांता संतति लोक विश्रुत साहित्यकार बाबू देवकीनंदन खत्री का विश्वप्रसिद्ध ऐय्यारी उपन्यास है।

बाबू देवकीनंदन खत्री जी ने पहले चन्द्रकान्ता लिखा फिर उसकी लोकप्रियता और सफलता को देख कर उन्होंने कहानी को आगे बढ़ाया और 'चन्द्रकान्ता संतति' की रचना की। हिन्दी के प्रचार प्रसार में यह उपन्यास मील का पत्थर है। कहते हैं कि लाखों लोगों ने चन्द्रकान्ता संतति को पढ़ने के लिए ही हिन्दी सीखी। घटना प्रधान, तिलिस्म, जादूगरी, रहस्यलोक, एय्यारी की पृष्ठभूमि वाला हिन्दी का यह उपन्यास आज भी लोकप्रियता के शीर्ष पर है।

बाबू देवकीनंदन खत्री लिखित चन्द्रकान्ता संतति हिन्दी साहित्य का ऐसा उपन्यास है जिसने पूरे देश में तहलका मचाया था। इस उपन्यास की लोकप्रियता का अंदाजा इस बात से ही लगाया जा सकता है कि इसे पढ़ने के लिए हजारों गैर-हिंदी भाषियों ने हिंदी सीखी। चंद्रकांता संतति उपन्यास को आधार बनाकर निरजा गुलेरी ने इसी नाम से टेलीविजन धारावाहिक बनाई। यह धारावाहिक दूरदर्शन के सर्वाधिक लोकप्रिय धारावाहिकों में शुमार हुई।

"चन्द्रकान्ता" और "चन्द्रकान्ता सन्तति" में यद्यपि इस बात का पता नहीं लगेगा कि कब और कहाँ भाषा का परिवर्तन हो गया परन्तु उसके आरम्भ और अन्त में आप ठीक वैसा ही परिवर्तन पायेंगे जैसा बालक और वृद्ध में। एक दम से बहुत से संस्कृत शब्दों का प्रचार करते तो कभी सम्भव न था कि उतने संस्कृत शब्द हम ग्रामीण लोगों को याद करा देते। इस पुस्तक के लिए वह लोग भी बोधगम्य उर्दू के शब्दों को अपनी विशुद्ध हिन्दी में लाने लगे जो आरम्भ में इसका विरोध करते थे।

काव्य के लिए ब्रज भाषा का प्रयोग होता था और गद्य के लिए खड़ी बोली का। लेखक ने इसी का अनुसरण करते हुए उपन्यास के काव्यांशों के लिए ब्रज भाषा चुना है।

चंद्रकांता संतति - Chandrakanta Santati in Hindi

1. चंद्रकांता संतति पहला भाग
2. चंद्रकांता संतति दूसरा भाग
3. चंद्रकांता संतति तीसरा भाग
4. चंद्रकांता संतति चौथा भाग
5. चंद्रकांता संतति पाँचवाँ भाग
6. चंद्रकांता संतति छठवां भाग
7. चंद्रकांता संतति सातवाँ भाग
8. चंद्रकांता संतति आठवाँ भाग
9. चंद्रकांता संतति नौवां भाग
10. चंद्रकांता संतति दसवां भाग
11. चंद्रकांता संतति ग्यारहवां भाग
12. चंद्रकांता संतति बारहवां भाग
13. चंद्रकांता संतति तेरहवां भाग
14. चंद्रकांता संतति चौदहवां भाग
15. चंद्रकांता संतति पन्द्रहवां भाग
16. चंद्रकांता संतति सोलहवां भाग
17. चंद्रकांता संतति सत्रहवां भाग
18. चंद्रकांता संतति अठारहवां भाग
19. चंद्रकांता संतति उन्नीसवां भाग
20. चंद्रकांता संतति बीसवां भाग
21. चंद्रकांता संतति इक्कीसवां भाग
22. चंद्रकांता संतति बाईसवां भाग
23. चंद्रकांता संतति तेईसवां भाग
24. चंद्रकांता संतति चौबीसवां भाग

https://www.hindiadda.com/chandrakanta-santati-part-xv/